

ओ३म

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

फरवरी २०१४

वर्ष ४३ : अङ्क ४
दयानन्दाब्द : १६०
विक्रम-संवत् : माघ-फाल्गुन २०७०
संष्टि-संवत् : १.६६.०८.५३.११४

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
सम्पादक (अवैतनिक) : राजवीर शास्त्री
प्रकाशक व प्रबन्ध सम्पादक: धर्मपाल आर्य
सम्पादक : डॉ. अशोक कुमार
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७. नया बांस, मन्दिर वाली गली.

खारी बावली, दिल्ली-६

दूरभाष : २३६८५५४५, ४३७८११६१

चलभाष : ६६५०६२२७७८

E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु० वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस लेख में

<input type="checkbox"/> एक बार फिर	२
<input type="checkbox"/> वेदोपदेश	३
<input type="checkbox"/> यवा और राजनीति	५
<input type="checkbox"/> भारत का प्राचीन...	७
<input type="checkbox"/> कल्याण का प्रहार....	१०
<input type="checkbox"/> प्राणायाम....	१४
<input type="checkbox"/> गरुकल शिक्षा....	१७
<input type="checkbox"/> स्वामी श्रद्धानन्द...	२१
<input type="checkbox"/> आर्य हिन्द...	२२
<input type="checkbox"/> वैदिक संस्कृति पर सरकारी....	२४
<input type="checkbox"/> सत्यार्थ प्रकाश.....	२७

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण — ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) — ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

एक बार फिर आना होगा....

(हरि कुमार साह- पर्व मंत्री. आर्य समाज. गोंडपारा बिलासपर (छत्तीसगढ़)

पाखण्डों के गढ़ में फिर वेदों का शंख बजाना होगा।

दयानन्द! भारत में तुमको एक बार फिर आना होगा।।

खूब हो रही पत्थर-पूजा, निराकार प्रभु को हैं भूले।

नए नए पाखण्ड रचा कर. ढोंगी दलदल बाबा फूले।।

ऐसे धूर्त ठगों को अब सत्यार्थ प्रकाश पढ़ाना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

भारत में हिंदी की देखो कैसी दुखद हुई है दुर्गति?

जन-मानस में फिर स्थापित हो हिन्दी. ऐसी दो सन्मति।।

भारत माँ को हिन्दी के किरीट से पुनः सजाना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

नारी आज भोग्या बन कर भारत भर में लुटी पिटी है।

मात शक्ति को पजित. सम्मानित करने की वृत्ति मिटी है।।

फिर से नारी को भोग्या से पूज्या हमें बनाना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

गूँजे बेटी की किलकारी, ऐसे बहे स्नेह की गंगा।

कन्या-भ्रण मिटाने वालों को समाज में कर दें नंगा।।

बेटी के हत्यारों को अब फाँसी पर लटकाना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

भारत में कट रहीं आज भी नित नित लाखों गौ माताएँ।

इनकी दारुण व्यथा कथा हम किसे सनाएँ? किसे बताएँ?

जन जन में जाकर गौ करुणा निधि का अलख जगाना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

भूले मात पिता की सेवा, भले वृद्ध जनों का आदर।

गड्डा गड्डिया पज रहे हैं. चढा रहे कब्रों पर चादर।।

दसवाँ, मृतक भोज, तेरही, बरखी है व्यर्थ, बताना होगा।

दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा।।

शाकाहार त्याग कर दुनिया हुई जा रही मांसाहारी।

धम्रपान अरु मद्यपान से दस दिश फैल रही बीमारी।।

शेष पष्ठ 4 पर

ओ३म

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सनना-सनाना सब आर्यों का परम धर्म है। — महर्षि दयानन्द

परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः। अग्निः = परमेश्वो भौतिकोऽग्निश्च।। निचद ब्राह्मी पंक्तिः। पंचमः स्वरः।।

अथाग्निशब्देन किं किं गृह्यते तेन किं किं च भवतीत्युपदिश्यते।।

अब, अग्निशब्द से किस-किस का ग्रहण किया जाता और इससे क्या-क्या अर्थ होता है। इस विषय का उपदेश किया है।।

ओ३म— धृष्टिरस्यपांऽग्ने ऽ अग्निमामादं जहि निष्क्रव्यादं॥१॥ सेधा देवयजं वह।

ध्रुवमसि पथिवीं दं॥ह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्यपदधामि भ्रातव्यस्य वधाय॥१७॥

पदार्थः—(धृष्टिः) प्रगल्भ इव यजमानः (असि) भवसि भवति वा। अत्र पक्षे व्यत्ययः (अप) क्रियायोगे (अग्ने) परमेश्वर धनुर्वेदविद्वान्वा (अग्निम्) विद्युदाख्यम् (आमादम्) आमानपक्वानन्ति तम् (जहि) हिंसय (निष्क्रव्यादम्) क्रव्यं=पक्वमांसमन्ति तस्मान्निर्गतस्तम् (सेध) शास्त्राणि शिक्षय (आ) क्रियायोगे (देवयजम्) देवान्=विदुषो दिव्यगुणान् यजसि=संगतान् करोति येन यजेन स देवयद् तम्। अत्र अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते इति सूत्रेण कृतो बहुलमिति वार्तिकेन करणे विच् प्रत्ययः (वह) प्रापय प्रापयति वा। अत्र सर्वत्र पक्षे व्यत्ययः (ध्रुवम्) निश्चलं सुखम् (असि) भवति (पृथिवीम्) विस्तृतां भूमिं तत्स्थान्प्राणिनश्च (दं॥ह) उत्तमगुणैर्वर्धय वर्धयति वा (ब्रह्मवनि) ब्राह्मणं=विद्वांसं वनसि तम्। छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्।। अ. ३/२/२७।। अनेन ब्रह्मो पदे वनधातोरिन्द्रप्रत्ययः। सुपां=सुलुगित्यमो लुक् च (त्वा) त्वां तं वा (क्षत्रवनि) क्षत्रं=संभाजिनं वनति तम्। अत्राप्यमो लुक् (सजातवनि) जातं जातं वनसि स जातवनिः समानश्वासौ जातवनिस्तम्। समानस्य छन्दस्य मूर्द्धप्रभृत्युदकेषु।। अ. ६/३/८४।। अनेन समानस्य सकारादेशः (उपदधामि) हृदये वेद्यां विमानादियानेषु वा धारयामि। (भ्रातव्यस्य) द्विषतः शत्रोः (वधाय)

नाशाय=हननाय।। अयं मंत्रः शं. २८१/५/३-८ व्याख्यातः।।१७।।

प्रमाणार्थ—(असि) भवति भवति वा। यहां पक्ष में व्यत्यय है। (देवयजम्) यहां देवपूर्वक यज् धातु से 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इस सूत्र से तथा 'कृतो बहुलम् वार्तिक से करण अर्थ में विच् प्रत्यय है। (वह) प्रापय प्रापयति वा। यहां सर्वत्र पक्ष में व्यत्यय है। (ब्रह्मवनि) यहां ब्रह्मपूर्वक वन् धातु से 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' (अ. ३/२/२७) से इन् प्रत्यय है। 'सुपां सुलुक्०- से अम् का लुक् है। (क्षत्रवनि) यहां भी 'अम्' का लुक् है। (संजातवनि) इस शब्द में 'समानस्य छन्दस्यमूर्द्धप्रभृत्युदकेषु' (अ. ६/३/८४) से समान को सकार-आदेश है। इस मन्त्र की व्याख्या शत. (१/१/५/३-८) में की गई है। १/१७।।

सपदार्थान्वयः — हे अग्ने=परमेश्वर! परमेश्वर धनुर्वेदविद्वान्वा! त्वं धृष्टिः प्रगल्भ इव यजमानः असि भवसि, अतो निष्क्रव्यादं क्रव्यं=पक्वानन्ति तं देवयजं देवान्=विदुषो दिव्यगुणान् यजति=संगतान् करोति येन यजेन स देवयद् तम् अग्निं विद्युदाख्यं सेध शास्त्राणि शिक्षय। एवं मंगलाय शास्त्राणि शिक्षित्वा दःखमपजहि हिंसय, सखं च आवह

प्रापय ।

तथा-हे परमेश्वर ! त्वं ध्रुवं निश्चलं सुखम् असि,
अतः पृथिवीं विस्तृतां भूमिं तत्स्थान्प्राणिनश्च दंह
उत्तमगुणैर्वर्धय ।

हे जगदीश्वराऽग्ने! परमेश्वर धनुर्वेदविद्वन्वा! यत्
ईदृशो भवान् तस्मादहं भ्रातृव्यस्य द्विषतः=शत्रोः वधाय
नाशाय=हननाय ब्रह्मवनि ब्राह्मणम्=विद्वांसं वनति तं,
क्षत्रवनि क्षत्रं=संभाजिनं वनति तं सजातवनि जातं जातं
वनसि स जातवनिः, समानश्चासौ जातवनिस्तं त्वा=त्वां
उपदधामि हृदये धारयामि । इत्येकोऽन्वयः ।

भाषार्थ :- हे (अग्ने) परमेश्वर! वा धनुर्वेदज्ञ विद्वान्
पुरुष! आप (धृष्टिः) निर्भय यजमान के समान (असि)
हो, इसलिए (निष्क्रव्यादम्) पके हुए मांस को न खाने
वाली (आमादम) कच्चे पदार्थों को खाने वाली (देवयजम)

देव अर्थात् विद्वानों और दिव्यगुणों को प्राप्त कराने वाली
(अग्निम्) विद्युत-विद्या के (सेध) शास्त्रों की शिक्षा कीजिये ।
इस प्रकार कल्याण के लिए शास्त्रों की शिक्षा देकर दुःख
को (अपजहि) दूर कीजिये और सुख को (आवह) प्राप्त
कराइये ।

तथा-हे परमेश्वर! आप (ध्रुवम्) निश्चल सुख रूप
(असि) हो, अतः (पृथिवीम्) विस्तृत भूमि और उस पर
रहने वाले प्राणियों को (दृहं) उत्तम गुणों से बढ़ाइये ।

हे (अग्ने) जगदीश्वर वा धनुर्वेदज्ञ विद्वान्! पुरुष क्योंकि
आप ऐसे उक्त गुण वाले हैं अतः मैं (भ्रातृव्यस्य) शत्रु
के (वधाय) नाश के लिए (ब्रह्मवनिम्) ब्राह्मण अर्थात्
विद्वानों के रक्षक (क्षत्रवनिम्) क्षत्रियों के रक्षक
(सजातवनिम्) मेरे समान अन्य पुरुषों के भी रक्षक (त्वा)
आपको वा उस धनुर्वेदज्ञ विद्वान को (उपदधामि) हृदय
में धारण करता हं ।।

पष्ठ 2 का शेष

हो आहार विहार, सात्विक, यह सबको समझाना होगा ।
दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा ।।

पर्यावरण अशुद्ध हो रहा, प्रकृति हो रही है नित आहत ।
जल, थल, वायु हो रहे दूषित, यज्ञ मात्र से होगी राहत ।।

यज्ञ सर्व जन के हित में है, सबको यज्ञ कराना होगा ।
दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा ।।

नया नाम डेटिंग काले कर, खूब वैश्यावृत्ति हो रही ।
नवयवकों में बेशर्मी से इसकी अति आवृत्ति हो रही ।।

सत्रह बार जहर खाया है, कई बार फिर खाना होगा ।
दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा ।।

वेद प्रचारित करने खातिर ईंटें, रोड़े पत्थर खाए ।
कष्ट सहे जीवन भर लेकिन अडिग रहे, तुम ना घबराए ।

वेदों के दीपक पर क्या तुम सा कोई परवाना होगा?
दयानन्द! भारत में तुमको एक बार फिर आना होगा ।।

पाखण्डों के गढ़ में फिर वेदों का शंख बजाना होगा ।
दयानन्द! भारत में तमको एक बार फिर आना होगा ।।

□ □

युवा और राजनीति

(धर्मपाल आर्य. २ एफ. कमला नगर. दिल्ली-७)

आजकल सभी राजनीतिक दलों में एक होड़ सी लगी हुई है कि राजनीति में युवाओं की भागीदारी अधिकाधिक हो। युवा उनकी राजनीति के मुखौटा बनें और वो मुखौटा युवा होने के साथ साथ यदि एक खानदान विशेष से जुड़ा हो फिर तो कहना ही क्या? जैसे-जैसे आम चुनाव नजदीक आते जा रहे हैं वैसे-वैसे सभी दल अपनी राजनीति बनाने में जुट गए हैं। युवा चेहरों को आगे कर राजनीति की जंग को जीतना ही राजनीतिक दलों का मुख्य उद्देश्य है। इसमें कोई दो राय नहीं कि युवा हमेशा ही राजनीति में आकर्षण का केन्द्र रहे हैं लेकिन इस बार यह आकर्षण कुछ अधिक ही दिखाई दे रहा है। क्या देश के मतदाता चेहरों को देखकर मतदान करेंगे अथवा बुनियादी मुद्दों को ध्यान में रखेंगे। जो युवा चेहरे राजनीति में आज हैं क्या उन्हें देश अथवा प्रदेश के बुनियादी मुद्दों की समझ है? जिन युवा चेहरों के हाथ में जिन प्रदेशों की कमान है क्या वे वहां पूर्णतः सफल रहे हैं अथवा अपने प्रदेश के लोगों की उम्मीदों पर खरे उतरे हैं? क्या देश की राजनीति राष्ट्रीय मुद्दों से हटकर युवा चेहरों तक सिमटने जा रही है? युवा राजनीति में अपनी भूमिका निभाएं यह आज राष्ट्र की आवश्यकता है अथवा राजनीतिक दलों की ढाल? उपर्युक्त प्रश्नों को पढ़कर पाठक यदि मुझ पर यह आरोप लगाने लगे कि “मैं युवाओं के राजनीति में आने के खिलाफ हूं तो कोई अचरज नहीं होगा। किन्तु मैं अपने पाठकों को बताना चाहूंगा कि मैं युवाओं की राजनीति में भूमिका के बिल्कुल खिलाफ नहीं हूं अपितु सकारात्मक पक्षधर हूं नकारात्मक नहीं। जिन युवाओं में राष्ट्रीय बुनियादी मुद्दों की समझ है, जिन

युवाओं में राष्ट्र को आगे बढ़ाने की तमन्ना है, जिन युवाओं में राष्ट्र की ज्वलन्त समस्याओं को सुलझाने की तमन्ना है, जिन युवाओं में देश की एकता, अखण्डता को दृढ़ करने का संकल्प है; जिन युवाओं में राष्ट्र को समग्रता के साथ समझने की क्षमता है, जिन युवाओं में राष्ट्र के लिए कुछ कर गुजरने की ललक है, जिन युवाओं में राष्ट्र की सांस्कृतिक विरासत को संभालने की दृढ़ इच्छाशक्ति है; जिन युवाओं में अपने महापुरुषों, ऋषियों और क्रान्तिकारियों द्वारा कल्पित संकल्पित सपनों का राष्ट्र बनाने का लक्ष्य है तथा जिन युवाओं में राष्ट्र के सर्वाङ्गीण विकास का भाव है तो ऐसे युवा यदि राजनीति में अपनी भूमिका निभाते हैं वे युवा ही देश के भविष्य हैं। ऐसे युवाओं से देश उत्थान की, न्याय की, विकास की और शान्ति की आशा कर सकता है। ऐसे युवाओं की राजनीतिक भूमिका का जो भी समर्थन करेगा मेरे विचार से वही युवाओं की राजनीतिक भूमिका का सकारात्मक पक्षधर होगा और केवल युवा वर्ग को राजनीति और राष्ट्र का सुधारक उद्धारक मानना राष्ट्रोन्नति के अन्य आवश्यक पहलुओं को नजर अन्दाज करना, उपरोक्त सिद्धान्त, राजनीति और राष्ट्र दोनों के ही लिए घातक है। यही नकारात्मक पक्ष और इसका समर्थक ही नकारात्मक पक्षधर है। मुझे उस समय बड़ा अजीब लगता है जब लोग कहते हैं कि युवा राष्ट्र की रीढ़ की हड्डी है, युवा देश की तकदीर है, युवा राष्ट्रीय राजनीति के कर्णधार हैं, युवाओं के कन्धों पर देश का भार है। परन्तु युवा रूपी रीढ़ की हड्डी में जब व्यसनों का घुन लगा हो, देश की युवा रूपी तकदीर जब पश्चिमी सभ्यता का शिकार हो, राष्ट्र और राजनीति के कर्णधारों पर जब

स्वार्थ का भूत सवार हो तथा जब युवाओं के कन्धे चारित्रिक, नैतिक बल के अभाव में शक्तिहीन हो गये हों ऐसे युवाओं को देश का और देश की राजनीति का कर्णधार कहना, तकदीर बताना, रीढ़ की हड्डी कहना कम से कम मुझे तो अटपटा सा ही लगता है क्योंकि यजर्वेद में एक स्थान पर स्पष्ट लिखा है कि

जिष्णुः रथेष्ठा सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् अर्थात् राष्ट्र में यजमान के पुत्र लेकिन युवा पुत्र जिष्णुः अर्थात् जयशील हों अन्दर और बाहर के शत्रुओं को जीतने वाले हों। यजमान के युवा पुत्र जीवन और जगत् की जंग को जीतने के लिए रथ के कुशल सवार हों। यजमान के युवा पुत्र सभ्य हों अर्थात् उनमें इतनी सभ्यता हो, इतनी शिष्टता, इतना चारित्रिक बल, पारिवारिक, सामाजिक व सार्वजनिक जीवन में इतना अनुशासन हो कि वे सभ्यजनों व विद्वज्जनों की सभा में बैठने के पूर्ण अधिकारी हों। यजमान के युवा पुत्र धर्मवीर हों, यजमान के युवा पुत्र कर्मवीर हों, यजमान के युवा पुत्र यज्ञवीर हों, यजमान के युवा पुत्र दानवीर हों, यजमान के पुत्र मानवीर हों और यजमान के के युवा पुत्र युद्धवीर हों ताकि राष्ट्र समृद्ध बन सकें। यह कथन सही हो सकता है राष्ट्र में आज की राजनीति एक दलदल है। इसके उत्तर में यह वाक्य भी सत्य हो सकता है कि इसे साफ करने के लिए इसमें कूदना ही पड़ेगा। मैं मानता हूँ कि पहला वाक्य एक बुजुर्ग का लम्बे अनुभव का परिणाम है और दूसरा वाक्य दृढ़ इच्छाशक्ति का द्योतक, राजनीतिक महत्वाकांक्षा का संकेत है, या फिर उत्साहातिरेक का परिणाम है यद्यपि इनमें से निश्चित तौर पर कुछ भी नहीं कहा जा सकता किन्तु इतना अवश्य है, यदि दृढ़ इच्छाशक्ति से आपने राजनीति की दलदल में छलांग लगायी है तब तो राष्ट्रोत्थान में आपके सकारात्मक योगदान की संभावना को नकारने का कोई कारण नहीं पैदा होता। परन्तु आपका उपर्युक्त

कथन (राजनीति की दल-दल को साफ करना है तो इसमें कूदना ही पड़ेगा) यदि राजनीतिक महत्वाकांक्षा का या उत्साहातिरेक का द्योतक है फिर तो आप इस दल दल में कूदकर फंस जायेंगे और न केवल फंस जायेंगे अपितु आप स्वयं भी दलदलमय हो जायेंगे। यही बात मैं युवाओं के सन्दर्भ में कहना चाहता हूँ कि यदि युवा राजनीति में आयें तो दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ आयें तब तो राष्ट्र में जागृति की संभावना है उसके सर्वांगीण विकास की आशा की जा सकती है। केवल महत्वाकांक्षा और उत्साहातिरेक से युवाओं का राजनीति में प्रवेश कम से कम मेरी तो समझ से बाहर है। राजनीति में जिष्णु हों, राजनीति में युवा रथेष्ठा हों, राजनीति में युवा सभेय (सभ्य) हो तथा राजनीति में युवा वीर हों तब तो युवाओं का राजनीति में प्रवेश समझ में आता है, अन्यथा उपरोक्त वेदोक्त गुणों के अभाव में युवाओं के राजनीति में प्रवेश की बात बेमानी साबित होगी। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राजनीति राष्ट्र के लिए है न कि राष्ट्र राजनीति के लिए परन्तु मुझे बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि अब हमारे नेताओं का आचरण उपर्युक्त धारणा के विपरीत हो रहा है। इसका परिणाम यह है कि राजनीति के प्रति आम आदमी की धारणा तेजी से बदल रही है। युवा के नाम पर कुछ परिवारों का राजनीति पर कब्जा कराने की जिस तरह से कोशिशें की जा रही हैं उनका राष्ट्र भक्ति से दूर-2 तक कोई सरोकार नहीं है। ये सिर्फ परिवारों के प्रति अपनी वफादारी दिखाने की होड़ है। अब यह देश कुछ परिवारों के, कुछ जातियों के और कुछ रईसजादों के युवा चेहरों का राजनीतिक उपनिवेश बन जाये तो कोई आश्चर्य नहीं होगा क्योंकि अन्दर और बाहर से इस प्रकार के कूटनीतिक प्रयास किये जा रहे हैं। अन्त में मैं अपने पाठकों से यही निवेदन करना

शेष पृष्ठ 4 पर

भारत का प्राचीन विज्ञान अभी भी अर्थपूर्ण है

(उत्ता नेरुकर. बंगलौर. मो: ०९८४५०५८३१०)

पिछले दिनों, गुजरात में, श्री नरेन्द्र मोदी की पहल पर, 'वाइब्रैन्ट गुजरात' नाम का शिखर सम्मेलन हुआ, जिसके इस सातवें संस्करण में शिक्षा को केन्द्र-बिन्दु बनाया गया। यह राष्ट्रीय शिक्षा शिखर सम्मेलन जनवरी 10-13, 2014, को महात्मा मन्दिर नामक सम्मेलन स्थल पर हुआ। यह स्थल कुछ-कुछ प्रगति मैदान जैसा है। उससे छोटा है, परन्तु कहीं अधिक नवीन व भव्य। यह महात्मा गांधी को समर्पित है। उनकी प्रतिमा के साथ-साथ उनके जीवन के महत्वपूर्ण क्षणों की झलकियां वहां लगाई गई हैं। सम्मेलन में, अलग-अलग विषय-वस्तुओं को लेकर, चार-चार गोष्ठियां एक-साथ चल रहीं थीं। इसी के अन्तर्गत महाराज सायाजीराव विश्वविद्यालय. वडोदरा ने 'Indian Heritage: Perspectives and Prospects' नाम का एक द्विदिवसीय अधिवेशन रखा। इसमें देश-विदेश के विद्वानों ने भाग लिया। 140 वक्तव्यों में से 30 को ही अधिवेशन में स्थान मिला। प्राचीनता के सन्दर्भ में अनेकों विषयों पर चर्चा हुई, जैसे- सिन्धु-घाटी सभ्यता में स्त्री की भूमिका, प्राचीन व्यापार में भरूच का महत्व, होएसाला की मूर्तियों का अर्थ-विश्लेषण, वैदिक गणित का संगणक (कम्प्यूटर) में प्रयोग आदि। सौभाग्य से, इस सभा में मुझे भी अपने कुछ विचार प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त हुआ।

मेरे पेपर का विषय था- 'Does ancient Indian knowledge have anything to contribute to the modern world?' अर्थात् क्या प्राचीन भारतीय ज्ञान का नवीन सन्दर्भ में कोई योगदान है? जैसा कि आप समझ सकते हैं? प्रश्न का उत्तर तो हां ही था। अपनी प्रस्तुति में मैंने प्राचीन भारत की ऐसी वैज्ञानिक उपलब्धियों को दर्शाने का प्रयास किया. जो अभी भी समझ के परे हैं।

साथ-ही-साथ मैंने कुछ सुझाव भी दिए जिससे कि इस प्राचीन ज्ञान को हम अपने आधुनिक परिवेश में स्थापित कर सकें।

आरम्भ में, मैंने वाराणसी के साह औद्योगिक अन्वेषण केन्द्र के प्रो. डोंगरे के द्वारा बनाए गए एक स्पेक्ट्रोमीटर (spectrometer) यन्त्र के बारे में बताया। यह यन्त्र एक प्रिज़्म (prism) के द्वारा प्रकाश की विभिन्न किरणों को अलग-अलग कर देता है। डोंगरे ने इस यन्त्र को महर्षि भरद्वाज प्रणीत 'यन्त्र-सर्वस्व' नामक ग्रन्थ की अंशुवोधिनी टीका के वर्णन के अनुसार बनाया था। ग्रन्थ में यन्त्र का नाम 'ध्वान्तप्रमापक यन्त्र' है। यन्त्र-सर्वस्व का काल आठवीं सदी से पूर्व का ठहरा है, किन्तु कितना पूर्व, यह ज्ञात नहीं है। डोंगरे ने पाया कि, आधुनिक यन्त्रों की अपेक्षा, इस प्राचीन यन्त्र की कुछ विशेषताएं हैं। पहले तो, यह यन्त्र तीन प्रकार की किरणों को बांट सकता है- visible, ultra-violet और infra-red। आधुनिक यन्त्र अधिकतर एक प्रकार की किरणों को ही अलग कर पाते हैं। प्राचीन लोगों को अन्य प्रकार की किरणों के विषय में ज्ञान भी था, यह स्वयं में आश्चर्यजनक बात है! पनः. आधुनिक यन्त्रों में प्रिज़्म त्रिकोणीय (triangular cross-section) होता है. परन्तु इस यन्त्र का गोलाकार (circular cross-section) था। इसके कारण किरणों को मापने की गणित बहुत सरल हो गई। इस प्रकार यह यन्त्र आज के यन्त्रों से गुणवत्तर है! यन्त्र बनाने की प्रक्रिया बहुत सरल नहीं है। इस ग्रन्थ से और डोंगरे के प्रयोग से अनुमान होता है कि प्राचीन भारतीय ऐसा सूक्ष्म यन्त्र बनाने में सक्षम थे। क्या हममें से कोई भी इस बात को जानता था? और

क्या यह प्राचीन यन्त्र हमें कुछ नई सीख नहीं दे रहा?!

इसके बाद मैंने 'समय' का विषय छेड़ा। इस विषय पर यजुर्वेद का एक मन्त्र है-

**येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहितममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।**

यजुर्वेद 34/4।।

अर्थात् ये जो भूत, वर्तमान और भविष्य हैं, इन सभी का यह नष्ट न होने वाला (अमृत) मन भली प्रकार ग्रहण करता है। इसका गढ़ अर्थ है कि ये तीनों

काल वस्तुतः

एक नहीं हैं-

इनको जैसे मन

हमें जोड़कर

प्रस्तुत करता है।

जबकि यह बड़ी

ही अजीब-सी

बात लगती है,

लेकिन आजकल

कुछ वैज्ञानिक

इसी मत की

ओर झुक रहे हैं

उनमें से एक हैं

जूलियन बारबर,

जिनका कहना है

कि हर क्षण अपने में पूर्ण है, और क्षणों को एक शृंखला या प्रवाह के रूप में जानना एक भ्रान्ति है- उसमें वास्तविकता नहीं है। लगता है, वेद और उनके विचार एक हैं, और यदि ऐसा है, तो पुनः स्वामी दयानन्द के वचन सही प्रमाणित होते हैं कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" अब हम वेदों में से कितना ग्रहण कर पाएं, वह हमारे ऊपर है। मैंने सुझाव दिया कि वैदिक विद्वानों और आधुनिक भौतिक वैज्ञानिकों को मिलकर

वेद के वचनों को सच्चा प्रमाणित करना चाहिए। इसी प्रकार अन्य वेद वाक्यों से हम इस ब्रह्माण्ड के अनेकों रहस्य खोल सकते हैं।

अन्य एक आश्चर्य है- भारत के अनेकों किलों, इमामबाड़ों, आदि में, ध्वनि-प्रसार। किलों में हम देखते हैं कि यदि एक निश्चित स्थान पर हम ताली बजाएं, तो उसकी ध्वनि एक किलोमीटर दूर तक के दूसरे स्थान तक बिना रोक-टोक के पहुंच जाती है। भीड़ के शोर के ऊपर भी हमें वह ध्वनि साफ सनाई पड़ जाती

है। इसी

प्रकार,

उनके

अन्दर के

बड़े-बड़े

प्रकोष्ठों में

एक कोने

में जलाई

माचिस की

तीली की

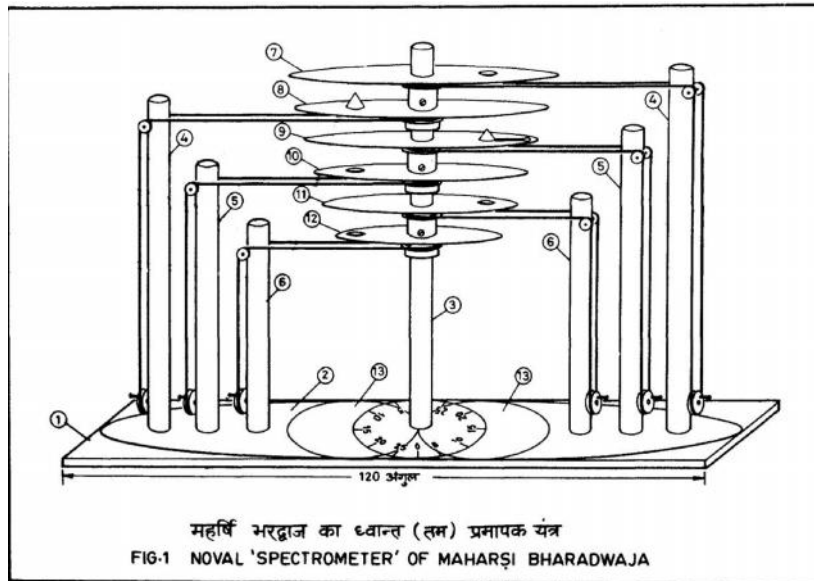
ध्वनि दूसरे

छोर पर

स्पष्ट सुनाई

पड़ जाती

है।



आजकल ध्वनि-प्रसार के लिए बहुत धन लगाया जाता है। जैसे कि बड़े रंगमन्दिरों, स्टेडियमों में।

किलो, प्रकोष्ठों की प्राचीन तकनीक को समझकर हम इन स्थलों में कम धन से वही hi-fidelity sound प्राप्त कर सकते हैं। और ध्वनि-प्रसार के बारे में हमारे ज्ञान में भी बढ़ोतरी होगी। जबकि यह कार्य कुछ शैक्षिक संस्थाओं ने कुछ हद तक किया भी है, परन्तु उनके निष्कर्ष किसी को भी उपलब्ध नहीं है। मैंने सझाव

दिया कि पुरातत्व, ध्वनि, भवन निर्माण और भौतिकी के विशेषज्ञों को मिलकर, पुराने अध्ययनों की समीक्षा कर के, नए प्रकार से उनके प्रयोग के सुझाव देने चाहिए। उनके शोध-परिणाम जन-साधारण तक पहुंचाने के लिए सभी माध्यमों-इलेक्ट्रॉनिक और प्रिन्ट का प्रयोग करना चाहिए। तभी वे व्यवहार में लाए जा सकते हैं।

फिर मैंने हल्दी की कहानी सुनाई। कैसे घावों में उसके प्रयोग द्वारा उपचार के लिए अमरीकनों ने पेटेंट प्राप्त किया, और कैसे एक भारतीय वैज्ञानिक- डॉ. माशेलकर ने उसका विरोध किया, जिससे कि पेटेंट खारिज करना पड़ा। आज सारा विश्व जानता है कि हल्दी के अनेकों स्वास्थ्य-संरक्षक गुण हैं। कैंसर को भी वह रोकती है। परन्तु हल्दी जैसे तो अनेकों पदार्थ आयुर्वेद में दिए गए हैं, जिनके अलग-अलग गुण हमें विभिन्न रोगों से बचाते हैं। आवश्यकता है कि आयुर्वेद विद्वान् इस धरोहर का पिटारा सबके लिए खोलें। आधुनिक चिकित्सा- ऐलोपैथी में स्वास्थ्य-संवर्धन के कम उपाय हैं, बिगड़े स्वास्थ्य को सुधारने के अधिक। यदि आयुर्वेद के स्वास्थ्य-संरक्षक पदार्थों और प्रक्रियाओं को वैज्ञानिक रूप से स्थापित कर दिया जाए, तो विश्व का कितना उपकार हो। इसके लिए आयुर्वेदज्ञों, आधुनिक चिकित्सकों और आधुनिक प्रकार से औषधि को प्रमाणित करने की प्रक्रियाओं को समझने वाले अनुसन्धानकर्ताओं को मिलकर काम करना होगा। आयुर्वेद की आधुनिक मापदण्डों से प्रमाणित करके, उसको पारम्परिक चिकित्सा के स्तर से उठाकर, पूर्णतया वैज्ञानिक पद्धति के रूप में स्थापित किया जा सकता है।

यही स्थिति योग में है। योगासनों और ध्यान-पद्धति का लाभ विश्व-भर में अनुभव किया जा रहा है। परन्तु इन लाभों को ठीक से प्रमाणित नहीं किया गया है, न ही इनके लाभ देने के कारणों को समझा गया है।

आजकल कुछ भारतीय और विदेशी अनुसन्धान धीरे-धीरे स्थापित कर रहे हैं कि आसनों और ध्यान के क्या-क्या लाभ हैं। हाल के एक शोध से ज्ञात हुआ कि ध्यान से भयंकर मानसिक विकारों, जैसे depression, schizophrenia, आदि में भी लाभ होता है। क्या ही अच्छा हो कि भारतीय अनुसन्धानकर्ता योग को सप्रमाण, सम्पूर्णता से समझने का प्रयास करें। यदि इसमें वे विदेशियों से जुड़कर काम करें, तो वह भी ठीक है। परन्तु इन शोधों के प्रामाणिक होने के लिए. इन्हें दीर्घकालिक और सार्वभौम (large sample size) होना पड़ेगा। योग-प्रशिक्षकों के सिवा, इसमें आधुनिक मस्तिष्क, हृदय, आदि, चिकित्सकों की सहायता लेना चाहिए। इसलिए इसमें बहत धन. समय और लगन की आवश्यकता है।

इन उदाहरणों से मैंने स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत का ज्ञान-भण्डार अभी भी अपने में ऐसे तथ्य समेटे हुए है, जिसको आधुनिक विज्ञान नहीं जानता। पिछले तीन तो कुछ ऐसे उदाहरण थे, जिन्हें वस्तुतः सभी प्रत्यक्ष देख रहे हैं, परन्तु ध्वान्तप्रमापक यन्त्र के समान अनेक विद्याएं पुरातन ग्रन्थों, भवनों, चित्रों आदि, में छिपी बैठी हैं। उनको उजागर करने के लिए, अत्यधिक परिश्रम व लगन की आवश्यकता है। स्वतन्त्रता के साठ से अधिक सालों के बाद हममें अब इतना आत्मविश्वास होना चाहिए कि हम विश्व के सामने अपनी बात प्रमाण के साथ स्थापित कर सकें। इसके लिए आवश्यक है नई पीढ़ी में आत्मविश्वास, अपनी धरोहर पर गर्व, और कार्य के प्रति वचनबद्धता हो। समय आ गया है कि हम 'चालू' काम करना बन्द करें, और अपने उत्तम अनुसन्धान से पुनः भारत को ज्ञान के शिखर पर पहुंचा दें. जिसके सामने परा विश्व नतमस्तक हो।

□ □

‘कल्याण’ का प्रहार-बासी कढ़ी में उबाल जैसा (1)

(राजेन्द्र ‘जिज्ञास’ वेद सदन. अबोहर-152116)

हमारे पौराणिक भाई स्वप्नलोक में रहने के अभ्यस्त हैं। देश के गली-गली, ग्राम-ग्राम, नगर नगर जगत् मिथ्या की लोरी सुनते सुनते इनकी यह मान्यता पुस्तकों में नहीं इनके जीवन में उतर चुकी है कि संसार स्वप्न है। जैसे नींद टूटने पर पता चलता है कि स्वप्न मिथ्या था इसी प्रकार यह जगत् भी मिथ्या है। जब जगत् है ही मिथ्या तो इसके सुधार, उद्धार और उपकार की चिन्ता क्यों की जावे। इसी दृष्टिकोण का यह फल है कि रामनगर काशी से एक मौलाना ने गीता के पुनर्जन्म सिद्धान्त तथा आत्मा की अमरता अथवा अनादित्व की धज्जियाँ उड़ा दीं। श्री कृष्ण तथा कणाद मुनि को ललकारा। यहाँ तक घोषणा कर दी कि पुनर्जन्म की मान्यता वालों को ‘दन्दान शिकन’ उत्तर दिया गया है। इसका अर्थ है ऐसे उत्तर कि विरोधी के दाँत ही तोड़ डाले हैं। बोलती ही बन्द कर देने की बात विज्ञापनों द्वारा कही जाती रही। देश भर से किसी भी सनातन धर्मी, मूर्ति पूजक, अवतारवादी, आचार्य, सन्त, महन्त ने इतने कड़े प्रहार का उत्तर न दिया। प्रतीकात्मक प्रतिकार भी न किया गया। न जाने आर्यसमाज के विरुद्ध सनातन धर्म की बासी कढ़ी में एकदम उबाल कैसे आ गया।

उत्तर दिया तो आर्य समाज ने। ऐसे ही दिल्ली के ‘जरायम’ मासिक उर्दू में कुछ वर्ष पूर्व हिन्दू सिखों पर भीषण प्रहार किया गया। कान्ति में तो यह सब कुछ होता ही है। उत्तराखण्ड में इसाईयों ने भी अवतारवाद की बाँसुरी बजाते हुए एक पुस्तक छपवाकर सनातन धर्म का ऑपरेशन क्लोरोफार्म सुंघाकर कर दिया कोई बोला तक नहीं। चलिये! हम पर वार करो. करते जाओ। हम स्वागत करेंगे। उत्तर देते रहेंगे।

परन्तु मासिक कल्याण ने तो बड़े जोश के साथ ‘नवधा भक्ति’ अर्चन शीर्षक से आर्यसमाज पर प्रहार करने की हिम्मत दिखाई है। श्री चक्र नाम के लेखक जी ने एक कहानी घड़ कर आर्यसमाज द्वारा प्रतिपादित उपासना पद्धति, ईश्वर की सत्ता व स्वरूप पर विचित्र कटाक्ष करते हुए निब घिसाने में बड़ी दक्षता दिखाई है। एक कहानी गढ़कर एक आर्यसमाजी गंगासिंह से कहलवाया गया है, “किसी जड़ को पूजने की अपेक्षा तो चेतन को ही पूजना अच्छा है। फिर चाहे वह पशु हो या पक्षी? उसमें हृदय तो है ही, वह भावना से प्रभावित होगा। लकड़ी पत्थर पर सिर मारने में क्या रखा है”

इस पर टिप्पणी करते हुए श्री चक्र लिखते हैं, “पक्के आर्यसमाजी के और दूसरे विचार हो भी क्या सकते हैं?” आगे किसी गणेश के मुख से कहलवाया गया है, “इस पद्धति से तो शून्य में बड़बड़ाने या गुमसुम बैठने की अपेक्षा लकड़ी-पत्थर भी भले रहेंगे! वे कुछ हैं तो सही।” गणेश ने ईंट का जवाब पत्थर से दे दिया।

जड़ और चेतन की पूजा का भेद सनातनी को समझ में आ जाता तो करोड़ों व्यक्ति धर्मच्युत न होते। विदेशियों की तलवार से तो धर्मच्युत हुए ही, अब तक घटते घिसते जा रहे हैं। तरुण विजय जी सांसद हैं। वह आर्यसमाजी नहीं। आपने गत दिनों एक लेख में यही तो लिखा है कि जड़ पूजा करते-करते हिन्दू में जड़ता गुण आ गया। उपास्य के गुण उपासक में आयेंगे ही। ध्यानावस्थित होने का श्री चक्र ने उपहास तो उड़ा दिया। कल्याण ने भी यह वार करवा दिया परन्तु यह भल गये कि कल्याण में ही श्री कृष्ण महाराज का एक

चित्र छप चुका है। श्रीकृष्ण को गुमसुम ध्यान में बैठा दिखाया गया है। शतप्रतिशत आर्यसामाजिक पद्धति से।

श्री चक्रजी कहिये! श्री कृष्ण को तो आप भगवान् बताया करते हैं। भगवान् कण्ठ कौन से भगवान् का ध्यान करते हैं?

श्री चक्र ने सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, निराकार, सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वर को 'शून्य' बताकर अपनी जड़बुद्धि, वेद शास्त्र निन्दक नीति का प्रदर्शन कर दिया है। वेद में उपनिषद् में परमात्मा को अकायम बताया गया है। कायारहित परमेश्वर को कल्याण शून्य बताकर सम्पूर्ण आस्तिक जगत् की खिल्ली उड़ा रहा है। चोट आर्यसमाज पर ही नहीं, श्री कबीर, गुरु नानक आदि सन्त महात्मा भी ईश्वर को निराकार ही मानते हैं। पक्के आर्यसमाजी के साथ पक्के सिख तथा पक्के कबीर पंथी शब्द जोड़ते हुए क्यों जान निकलती है? मूर्तिपूजा के विरोधी आर्यसमाजी ही नहीं प्रत्युत और भी लाखों करोड़ों लोग भारतीय समाज में हैं। आपकी जानकारी के लिए बता दें कि सनातन धर्म की प्रसिद्ध आरती के रचयिता पं. श्रद्धाराम का चेला साधु तुलसी देव था तो हरिजन मन्दिर का महन्त परन्तु उसे कभी भी किसी ने मूर्तिपूजा करते नहीं देखा था।

आपके सनातनधर्म के ध्वजवाहक पं. श्रद्धाराम तो ईश्वर की सत्ता को ही नहीं मानते थे। उनका ग्रन्थ सत्यामृत प्रवाह फिर छप गया है। दिल्ली से मंगवा कर पढ़ लीजिये। वह तो 'शून्य' से भी आगे निकल गये।

महोदय, आपने तो आर्यसमाज के विरोध में अंधे होकर अपने सनातन धर्म की भी लुटिया डुबो दी। शङ्कराचार्य जी की परापूर्णा ही पढ़ ली होती। शङ्कर स्वामी ने मूर्तिपूजा के बारे में क्या लिखा है. यह परापूर्णा में पढ़ लें।

श्रीमन्! आपको थोड़ा पढ़ लिखकर आर्यसमाज पर वार प्रहार करना चाहिये था। आपको पता होना चाहिये कि लगभग एक शताब्दी पूर्व पौराणिक ब्राह्मण ज्ञानियों

के माधुरी मासिक में ईश्वर बहिष्कार का एक आन्दोलन किसी ने छेड़ा था। उसने नास्तिकवाद की डुगडुगी जाते हुए डार्विन, कार्ल मार्क्स तथा चारवाक को भी पीछे छोड़ दिया। तब आपके काशी, वृन्दावन, मथुरा, पुरी, नासिक, तिरुपति के एक भी तिलकधारी प्रतिमा पूजक को उसके लम्बे लेख का उत्तर देने का साहस न हुआ। उस समय आपके पूज्य ब्राह्मणों को एक कट्टर आर्यसमाजी पं. गंगा प्रसाद जी उपाध्याय की शरण लेनी पड़ी। उपाध्याय जी ने नास्तिकता के प्रतिवाद तथा ईश्वर सिद्धि के मण्डन में जो लेख लिखा तो 'ईश्वर बहिष्कार' आन्दोलन वालों को "गुमसुम बैठने" वाले एक आर्यसमाजी के लेख का खण्डन करने की हिम्मत ही न हुई?

कृतज्ञता का प्रकाश करना तो आप सीखे ही नहीं। आपने आर्य विचार धारा पर प्रहार करते हुए आर्यसमाजी गंगासिंह को सत्यनिष्ठ, सदाचारी तथा ईशोपासक तो माना है। इसके लिए धन्यवाद स्वीकार करें परन्तु आपने हमारे दिलजले, निर्भीक, धर्मवीर, धर्मरक्षक, समर्पित और बलिदानी शास्त्रार्थ महारथियों तथा शास्त्रार्थों पर व्यंग्यबाण छोड़कर अपनी हीन मानसिकता व दुर्भावना का परिचय दिया है। महोदय! पं. गंगाप्रसाद शास्त्री जी सनातन धर्मी विद्वान् नेता की पुस्तक तो पढ़ी होती। वह लिखते हैं कि एक सुप्रसिद्ध तिलकधारी, प्रकाण्ड विद्वान् मूर्तिपूजक इसाई बन गया। उसने काशी, प्रयाग, मथुरा, वृन्दावन, नासिक, दक्षिण की काशी पूना नगरी तक के सनातन धर्मी आचार्यों को ललकारा। सबकी नींद हराम कर दी। कोई मूर्तिपूजक उससे टक्कर न ले सका।

आपके पं. गंगा प्रसाद शास्त्री लिखते हैं कि यह स्वामी दयानन्द ही थे जिन्होंने उसके होश उड़ा दिये। वह आर्यों का कहीं भी सामना न कर पाया। और सुनिये! आपके इसी सनातन धर्मी इसाई पं. नीलकण्ठ शास्त्री ने महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र महाराजा दिलीपसिंह को धर्मच्युत करके इसाई बनाया था। सिख ज्ञानियों ने भी पंजाब आने पर नीलकण्ठ शास्त्री (तब

वह पादरी था) को शास्त्रार्थ की चुनौती न दी। आर्यसमाजियों ने लाहौर से भी उसे भगा दिया।

श्रीमन् भक्त रामशरण दास जी की जीवनी पढ़िये। कल्याण के उत्रायक जाति भक्त रामशरणदास जी ने लिखा है कि एक मौलवी कृष्ण अवतार बनकर दिल्ली में हिन्दुओं को भ्रष्ट करने में लगा था। किसी से कुछ न बन पाया। आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी पं. रामचन्द्र जी देहलवी ने ललकारा तो वह दुम दबाकर भाग खड़ा हुआ। आपने तो कृतघ्नता की अति करते हुए हमारे धर्मवीर धर्मरक्षक शास्त्रार्थ महारथियों का अवमूल्यन करके सनातन धर्म का डंका बजा दिया। आपको पता होना चाहिये कि राजा सर किशनप्रसाद को मुसलमान होने से पं. रामचन्द्र जी देहलवी ने ही बचाया था। हमारे पं. शान्तिप्रकाश जी ने झोकातरा पश्चिमी पंजाब में सनातन धर्म सभा की गुहार सुनकर वहाँ के एक बड़े भूपति को मुसलमान बनने से बचाया। उसी के साथ पाँच सहस्र और हिन्दू धर्मच्युत होते-होते बचा लिये गये। तुम्हारी सनातन धर्म सभा का वही मन्त्री जो पं. शान्ति प्रकाशजी को मोर्चे पर ले कर आया था, अब कोसी पलवल के पास रहता है और तभी से वह दह आर्यसमाजी है।

हमारे पं. धर्मभिक्षु, ठाकुर अमरसिंह, महाशय चिरञ्जीलाल प्रेम, पं. नरेन्द्र जी हैदराबाद की सेवाओं व उपलब्धियों को तुम क्या जानो? पादरी जोज़ेफ कुक भारत आया। उसने अपने व्याख्यानों से सारे देश में खलबली मचा दी। सारे भारत को इसाई बनाने में सफल होने का उसमें भरपूर आत्म विश्वास था। सारे देश में क्या कोई मूर्तिपूजक उसके सामने आ सका। पढ़े लिखों के दिलों में पादरी कुक घुस रहा था। ऋषि दयानन्द ने स्वयं मुम्बई में जाकर उसकी, उसके ईसाई मत की समीक्षा की। वैदिक धर्म की श्रेष्ठता पर व्याख्यान दिया। पादरी को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। गोरों के राज में गोरा पादरी ऋषि दयानन्द ने सागर पार भगा

दिया। फिर उसने इधर मुँह ही नहीं दिखाया। आप कृपा करके सनातनधर्म की दो चार ऐसी उपलब्धियाँ तो गिना दें।

बहकाना छोड़िये :- बार बार आप मन की एकाग्रता, ध्यान किस पर लगायें की चर्चा छोड़कर सत्य को ग्रहण करें। यदि मूर्ति से ही मन एकाग्र हो जाता है तो फिर मन्दिर व घर में मूर्ति पूजा करने वाले प्रत्येक सनातनी को सिद्ध योगी मानना चाहिये। अर्जुन ने मन की एकाग्रता का जब प्रश्न उठाया था तो श्री कृष्ण जी ने उसे 'मूर्तिपूजा' का सस्ता सा टोटका क्यों न बता दिया? उन्होंने अर्जुन को अभ्यास व वैराग्य के चक्र में क्यों डाल दिया। तिलकधारी बन्धुओ। लोगों को बहकाना व भ्रमित करने का धंधा छोड़ दो। आपको पता होगा कि डॉ. इकबाल ब्राह्मण कुल में जन्मा था। उसने और उसके परिवार ने सनातन धर्म क्यों छोड़ा? मुख्य कारण तम्हारी मूर्ति पूजा थी। वह लिखता है:-

सच्च कह दूँ अय ब्राह्मण गर तू बुरा न माने।

तेरे सनमकदे के बुत हो गये पुराने।।

हमारी न सुनो, भाई की तो सुन लो:- हे पक्के सनातन धर्मी जी! आप हमारी न सुनो, ऋषियों की न सुनो, वेद शास्त्र की न सुनो परन्तु अपने सनातन धर्म भाई मूर्तिपूजक कुल के डॉ. इकबाल की तो सुन लो।

ध्यान किसे कहते हो? महोदय आपने अपने लेख में, "आदर्श पुरुष का ध्यान उसके आदर्श मन में उथित होते हैं"

यह वाक्य लिखकर भोले भाले शास्त्र शून्य हिन्दू जगत् को बहकाने का अच्छा टोटका खोज निकाला। आप लोग करोड़ों की संख्या में घण्टे घड़ियाल बजाकर भोग लगा कर ऐसा ध्यान तो नित्य करते हैं। कितनों के मन में आदर्श पुरुषों के आदर्श उथित हो गये? ऋषियों की सन्तान मूर्ति पूजा से बहुत आगे निकल गई। आपका हनुमान, कृष्ण, राम सब भूमि से 5-6 फुट ऊँचा होता है। आपके मूर्तिपूजक फिल्मी कलाकार बच्चन

परिवार तक मूर्तियों को छोड़कर भूमि के नीचे गाड़े गये मुर्दों के मजारों से मनौती माँगने और चादर चढाने जाते हैं। कहाँ गया आपका ज्ञान ध्यान?

आप ध्यान विषय में जानते ही क्या हैं? ध्यान का अर्थ अंग्रेजी का Attention शब्द नहीं है। प्यारे पक्के सनातन धर्मी सांख्य दर्शन उठा कर देख वहाँ क्या लिखा है। सांख्य की टीका किसी भी पौराणिक पण्डित जी की उठालें 'ध्यानं निर्विषयं मनः' इस सूत्र के अर्थों तथा व्याख्या को पढ़ लें। यह सूत्र बाल ब्रह्मचारी ऋषिवर दयानन्द का बनाया नहीं है। यह कपिल मुनि जी का सूत्र है। यहाँ स्पष्ट शब्दों में मन के निर्विषय होने को ध्यान कहा गया है। जब मूर्ति सामने हैं तो आँख तथा स्पर्श इन्द्रिय दोनों का विषय उपस्थित होने से किसी का ध्यान क्या लगेगा?

यदि मूर्ति सामने रखने से ध्यान लग जाता है तो फिर योगदर्शन लिखने की एक ऋषि को क्या आवश्यकता पड़ गई? फिर आप लोग योग योग की रट भी अपने पोथियों में क्यों लगाते हो। हमने तो सुना है कि कल्याण की गीता प्रेस से भी योग तथा योग दर्शन पर ग्रन्थ छपते रहते हैं।

मूर्ति पूजा या ईश्वर पूजा :- आप को तो समझाना भी बड़ा कठिन है। जड़ की पूजा करते-करते अपनी बुद्धि मारी गई है। आप मूर्तिपूजा की चर्चा करते हुए ईश्वर पूजा पर आ जाते हैं और ईश्वर पूजा का प्रश्न छोड़कर मूर्तिपूजा पर पहुँच जाते हैं। हम ईश्वर पूजा को ईश्वर पूजा मानते हैं। मूर्तिपूजा को मूर्तिपूजा मानना चाहिये। मूर्ति को ईश्वर कैसे मान लिया जावे? ईश्वर एक है और सर्वत्र है। जब ईश्वर एक है। ईश्वर दो, तीन, चार और पाँच नहीं तो फिर ईश्वर की मूर्ति भी एक ही होनी चाहिये। वह प्रभु सच्चिदानन्दस्वरूप है। वह सदा से सच्चिदानन्द है। एक ही नगर में, एक ही मन्दिर में अनेक मूर्तियाँ मिल जाती हैं। सभी भगवान् की कैसे हो गई। जब ईश्वर एक है और सर्वत्र है तो

नगर नगर, गली गली उसका रूप सर्वत्र एक सा क्यों नहीं? साई बाबा और सत्य साई बाबा दोनों ही अवतार थे। दोनों की आकृति, उठना बैठना क्या एक था?

आयु 83 वर्ष की है। मेरी लिखाई (Handwriting) नहीं बदली। प्रभु ने गाय, बैल, भैंस, बकरी, हाथी, घोड़े, पक्षियों, कीड़े, मकोड़ों व मनुष्यों के शरीर बनाये। जैसे पहले इन योनियों के शरीर बनते रहे प्रभु आज भी वैसे ही इन योनियों के शरीर बनाता है। प्रभु की कल नहीं बदली। ज्ञान नहीं बदला। उसका विधान नहीं बदला तो फिर भगवान् का शरीर और स्वरूप ही क्यों बदलता रहता है। अनादि प्रभु का उपहास उड़ाना छोड़ दो। यह उपहास नहीं प्रत्युत क्रूर उपहास है।

भोग और भगवान् :- हमारे पक्के सनातन धर्मी श्री चक्र जी! आपने मूर्तिपूजकों की दिनचर्या पर कभी विचार किया? यह कैसे ध्यान लगाते हैं। तनिक दिल्ली में मन्दिर वाली गली अथवा श्रद्धानन्द बाजार से निकल कर देखिये। वहाँ सनातनी और सेठ आते जाते घण्टा बजाकर सिर झुकाकर, पैसे फेंक कर आगे चल देते हैं। बस हो गया ध्यान। निपट गई पूजा। कोई कोई सेठ भगवान् को भोग भी लगाता जाता है। शास्त्रों में तो ईश्वर को भोग देने वाला बताया गया है। 'कर्म भोग' यही था। इस वाक्य का अर्थ क्या है? न्यायकारी प्रभु को क्यों कहा? जल, वायु, अन्न, धन, फल-फूल, दूध कौन देता है? आप मानेंगे कि सब कुछ भगवान् ही देता है। पक्के सनातन धर्मी जी! क्या आपने कभी भगवान् को दूध, फल, मिठाई, डोसा, इडली खाते देखा? अरे भाई जब वह खाता ही नहीं, खिलाता है। वह देता है, लेता नहीं फिर भगवान् को भोग लगाने का नाटक किस लिए? तभी तो सनातन धर्मी विद्वान् साने गुरुजी ने भोग लगाने को व्यर्थ कहा। हमारे शास्त्रार्थों की गज्ज उनके हृदय से निकली।

(शेष फिर)

□ □

प्राणायाम: वेद और विज्ञान की दृष्टि में !

(रामनिवास गणग्राहक)

भारतीय संस्कृति को स्वयं वेद ने विश्व की प्रथम संस्कृति बताकर उसे 'विश्ववारा' अर्थात् सबके लिए वरण करने, स्वीकार करने के योग्य कहा है। प्रथम कहने के भी कई अर्थ हो सकते हैं- काल की दृष्टि से देखें तो सबसे प्राचीन (पुरातन) को प्रथम कह सकते हैं, लेकिन भारतीय संस्कृति वेद-आधारित है इसलिए 'वैदिक संस्कृति' कहलाती है। वेद और वैदिक संस्कृति काल की दृष्टि से पुरातन से भी आगे 'सनातन संस्कृति' है, अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ से ही है। दूसरे अर्थ में गुणवत्ता की दृष्टि से भी बात करें तो वैदिक संस्कृति प्रथम कोटि की अर्थात् संसार की शेष संस्कृतियों से उच्च स्तर की, ऊँचे आदर्शों व जीवन मूल्यों की संवाहिका है। वैदिक संस्कृति वह है, जिसके समस्त आचार-विचार, मान्यता-मन्तव्य और नियम-सिद्धान्त वेद पर आधारित हों। भारतीय संस्कृति के ऐसे सभी तत्त्व, जीवन को ऊँचा उठाने वाले आदर्श वेदों पर आधारित हैं। मध्य काल में पुराण आधारित कुछ मान्यताओं के कारण कतिपय विकृतियों ने वैदिक यज्ञानुष्ठानों व उपासना पद्धति से लेकर कर्मफल व्यवस्था व ईश्वर के सच्चे स्वरूप तक को तर्क व विज्ञान के विरुद्ध बनाकर रख दिया।

प्रभु कृपा से भारत-भूमि को महर्षि दयानन्द के रूप में एक क्रान्तिधर्मी सुधारक प्राप्त हुआ। महर्षि दयानन्द ने गुरु से प्राप्त व्याकरण-विद्या और स्वयं की सतत साधना के बल पर वेदों के उस सच्चे स्वरूप को उद्घाटित किया तो समूची वैदिक संस्कृति अपने सनातन स्वरूप में मस्कराने लगी। महर्षि दयानन्द सरस्वती की शक्ति

साधना से सुवासित, सुप्रकाशित वैदिक संस्कृति के एक तत्त्व योग व प्राणायाम को लेकर उसे विश्व-पटल पर प्रतिष्ठित करके स्वामी रामदेव जी संसार का अनुपम कल्याण कर रहे हैं। स्वामी रामदेव जी महाराज प्रायः कहा करते हैं कि हम दो सौ करोड़ वर्ष पुरानी संस्कृति के वारिस हैं, प्रतिनिधि हैं। वह संस्कृति वैदिक संस्कृति ही है, हमें अपने भाग्य पर गर्व होना चाहिए कि हम सबसे प्राचीन (सनातन) एवं सर्वाधिक कल्याणकारी (विश्ववारा) संस्कृति के संवाहक हैं। हमारी संस्कृति में सम्पूर्ण जीवन शैली ही इतनी सरल, सुगम और शान्तिप्रद है कि आज के भाग-दौड़ भरे तनाव पूर्ण वातावरण और गलाकाट प्रतिस्पर्धा के युग में उसकी कल्पना भी हमारे मानस को आनन्द विभोर कर डालती है। स्वामी रामदेव जी उसके एक तत्व 'योग' को लेकर चले हैं तो विश्व का बुद्धिजीवी वर्ग योग की महत्ता व लाभों को देखकर चमत्कृत हो कर रह गया है। यह योग विद्या वेदों की ही देन है, योग केवल आसन-प्राणायाम तक ही सीमित नहीं है- योग तो वैदिक ऋषि मुनियों के द्वारा परिष्कृत वह जीवन शैली है, जिसे अपना कर संसार का हर मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन को सुख शान्ति व आनन्द से परिपूर्ण कर सकता है। स्वामी रामदेव जी महाराज भी यही लक्ष्य लेकर योग को विश्व व्यापी बनाने का दिव्य अभियान चला रहे हैं।

प्राणायाम योग का मूल है, योग दर्शन के अनुसार अष्टांग योग की बात करें तो यम, नियम और आसन को बहिरंग और प्राणायाम से अन्तरंग योग प्रारम्भ होकर प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि तक पहुँचता है।

प्राणायाम को अन्तरंग योग का प्रवेशद्वार कह सकते हैं। यही कारण है कि प्राणायाम हमारे स्थूल शरीर (शारीरिक स्वास्थ्य) व सूक्ष्म शरीर (मन-इन्द्रियाँ) को स्वस्थ एवं सबल बनाने का काम करता है। यह सब जानते हैं कि हमारे शरीर के समस्त अंगों-प्रत्यंगों में जो रक्त का संचार होता है, शरीर संचालन की जो अन्दर-बाहर की गतिविधियाँ होती हैं- उन सबके मूल में प्राण ही काम करता है। शारीरिक कार्य व्यापार की दृष्टि से प्राण को दस भागों में बाँटा गया है। इन दस प्राणों के दो विभाग किये गए हैं प्रथम पाँच प्राणों-प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान को मुख्य प्राण और नाग, कूर्म, कुकल, देवदत्त और धनञ्जय को उप-प्राण कहा गया है। लगे हाथ इनके कामों का परिचय भी दे दिया जाए। प्राण-भीतर से बाहर आने वाला, अपान-बाहर से अन्दर लिया जाने वाला, समान- नाभिस्थ होकर शरीर में रस पहुँचाने वाला, उदान- कण्ठ में स्थित अन्नपान को खींचने व बल पराक्रम करने वाला, और व्यान उसे कहते हैं जिससे सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। उपप्राणों में- छींक, डकार, वमन और दस्त आदि कार्य करने वाला नाग, पलक झपकना कूर्म, भूख प्यास की उत्पत्ति कुकल, निद्रा-तन्द्रा व जम्हाई का काम देवदत्त नामक उप-प्राण का और मूर्छा व बेहोशी आदि कार्य धनञ्जय नामक उप प्राण के हैं। इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि शरीर की सम्पूर्ण गतिविधियाँ प्राणों से ही संचालित होती हैं। उन प्राणों का सम्यक् संचार सम्पूर्ण शरीर को स्वस्थ रखता है दूसरी ओर प्राणों के लेने-छोड़ने में अनुचित ढंग अपनाने से पूरा शरीर गड़बड़ा जाता है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं- 'प्राणायाम से प्राण अपने वश में होने से इन्द्रियाँ स्वाधीन होती हैं। बुद्धि तीव्र सूक्ष्म रूप हो जाती है कि जो बहत कठिन व सूक्ष्म विषय को

भी शीघ्र ग्रहण करती है। इससे मनुष्य-शरीर में बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता की वृद्धि होती है।' (सत्यार्थ प्रकाश तीसरा समु.)

महर्षि दयानन्द स्वयं बड़े महान् योगी थे। प्राणायाम के द्वारा जो लाभ उन्होंने बताए हैं, वे सब उन्होंने प्राप्त किये थे। महर्षि मनु का कथन भी इसकी पुष्टि करता है कि प्राणायाम से हमारे आन्तरिक दोष नष्ट हो जाते हैं। वे लिखते हैं-

दहन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।

तथेन्द्रियाणां दहन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥

(6.70)

जैसे धौंकनी की आग में पड़े हुए धातुओं के समस्त मल व दोष नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही प्राणायाम करने से इन्द्रियों के सारे दोष नष्ट हो जाते हैं। योग दर्शन के यशस्वी प्रणेता महर्षि पतञ्जलि योग दृष्टि से प्राणायाम का महत्त्व बताते हैं- "ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्" (यो. 2.52)! 50-51वे सूत्रों में प्राणायामों का परिचय देने के बाद 52.53वे सूत्रों में उनके लाभ गिनाते हुए कहा है कि इन प्राणायामों के करने से हमारे विवेक ज्ञान पर पड़ा हुआ अज्ञान आदि का आवरण नष्ट हो जाता है। अगले सूत्र में कहा है- 'धारणासु च योग्यता मनसः' (2. 53) अर्थात् दूसरा लाभ यह होता है कि धारणाओं में मन की योग्यता हो जाती है। योग के आठ अंगों में छठा स्थान धारणा का है! 'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा' (यो. 3.1) चित्त की वृत्तियों को देश विशेष में बाँधना अर्थात् रोकना धारणा कहलाती है। प्राणायाम के करने से दूसरा सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे हमारे मन को एकाग्र कर इच्छित विषय में टिकाये रखने की योग्यता आ जाती है।

आज मनुष्य का मन उसे जो उल्टे सीधे नाच

नचाता है, वह प्राणायाम के करने से ऐसा आज्ञाकारी बन जाता है कि आप उसे जहाँ चाहो वहाँ टिका सकते हैं- क्या यह छोटी बात है? ऋषियों ने लिखा है-

“प्राणो विलीयते यत्र मनस्तत्र विलीयते।

मनो विलीयते यत्र प्राणस्तत्र विलीयते।।”

अर्थात् जहाँ प्राणों का लय होता है, वहाँ मन भी लीन हो जाता है और जहाँ मन का लय होता है, वहीं प्राण लीन हो जाते हैं। ऋषियों का यह अनुभव सिद्ध कथन आज के युग में हम भौतिकवादी लोगों के लिए किसी दिव्य वरदान से कम नहीं है। ऋषियों के कथन इतने ही तर्क संगत व ठोस होते हैं, जितने आज के उच्च वैज्ञानिकों के विज्ञान सम्बन्धी निष्कर्ष होते हैं, क्योंकि ये दोनों सत्य के निकट जाकर, उसे जाँच-परखकर बोलते हैं। ऋषि कहते ही उसे हैं, जो साक्षात् द्रष्टा होता है- “ऋषयो-साक्षात् द्रष्टारो बभूवुः” इसीलिए ऋषियों का कथन कभी एक दूसरे के विरुद्ध नहीं होता, चाहे सृष्टि के प्रथम संविधान निर्माता महर्षि मनु हों या 150-200 वर्ष पहले मानवता को वैदिक पथ पर लाने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती। ये सभी ऋषि महर्षि योग व प्राणायाम के बारे में एक स्वर से जो लाभ बता रहे हैं, उनका मूल स्रोत वेद हैं! वेदों में योग व प्राणायाम के सम्बन्ध में बहुत विस्तार से चर्चा की गई है। हम यहाँ केवल प्राणायाम पर ही विचार कर रहे हैं, तो वेदों में प्राणायाम के बारे में वैसे ही परिष्कृत विचार प्रस्तुत किये हैं, जैसे कि आज के शरीर विज्ञानी अपनी गहन चिकित्सकीय परीक्षाओं के बाद प्रस्तुत करते हैं।

वेदों में प्राणवायु के औषधीय गुणों के साथ-साथ बाहर निकलने वाले प्रश्वास को भी रोगहारी कहा है। ऋग्वेद के ये दो मन्त्र इस विषय पर अच्छा प्रकाश डालते हैं-

ओं ह्राविमौवातौवात आ सिन्धोरापरावतः।

दक्षं ते अन्य अवातु परान्यो वातु यद्रपः।।

ओं आवात वाहि भेषजम् विवात वाहि यद्रपः।

त्वं हि विश्व भेषजो देवानां दत्त ईयसे!!

(ऋ.10.137.2-3)

इन मन्त्रों में कहा है- श्वास-प्रश्वास के रूप में दो वायु शरीर में निरन्तर आ जा रहे हैं। एक अन्दर जाने वाला वायु हमें बल व नैरोग्य देता है और दूसरा जो बाहर आता है वह हमारे रोगों को दूर करता है। यहाँ स्पष्टतः वायु को औषधि कहा है- ‘त्वं हि विश्वभेषजः’। इस प्रकार यह प्राणायाम विद्या संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में होने पर भी आधुनिक विज्ञान से पर्णतः मेल खाती है।

स्वामी रामदेव जी द्वारा इस योग, प्राणायाम-विद्या के प्रचार-प्रसार से होने वाले लाभों की गिनती करना भी सहज नहीं। आज यदि मनुष्य शारीरिक स्वास्थ्य लाभ, प्रखर बौद्धिक प्रतिभा, मानसिक शान्ति, उत्कृष्ट कार्य क्षमता जैसे अनमोल तत्व केवल एक प्राणायाम विद्या से ही पा ले, तो पूरी मानवता सुख-शान्ति व समृद्धि से भर उठे। स्वामी जी महाराज का यह योग-अभियान मानवता का मुक्ति द्वार बन सकता है। जब हम प्राणायाम के लाभ प्राप्त करने लगेंगे, प्राणों के औषधीय गुण से परिचित होने लगेंगे तो निश्चित रूप से अगला ही कदम पर्यावरण प्रदूषण को मिटाने के लिए बढ़ेगा। प्रदूषित वायु प्राणायाम के लाभों से वञ्चित ही नहीं करती, हानि प्रद भी हो सकती है। स्पष्ट है कि प्राणायाम पर्यावरण चेतना का उत्प्रेरक भी हो सकता है- इस प्रकार योग अभियान से जुड़ा हुआ हर मनुष्य एक चतुर्दिक चेतना को प्राप्त कर मानवता का सजग प्रहरी बन जाता है।

□ □

‘गुरुकुल शिक्षा प्रणाली बनाम पब्लिक स्कूल’

- मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

मानव सन्तान को शिक्षित करने के लिए एक पाठशाला या विद्यालय की आवश्यकता होती है। बच्चा घर पर रह कर मातृ भाषा तो सीख जाता है परन्तु उस भाषा, उसकी लिपि व आगे विस्तृत ज्ञान के लिए उसे किसी पाठशाला, गुरुकुल या विद्यालय में जाकर अध्ययन करना होता है। केवल भाषा से ही काम नहीं चलता अपितु अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान गुरुकुल, पाठशाला या विद्यालय में कराया जाता है। उदाहरण के लिए मातृ भाषा के साथ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी व कुछ अन्य भाषाएँ भी आवश्यकतानुसार सीखनी होती हैं। भाषा के साथ गणित, सामान्य ज्ञान, कुछ अध्यात्म, इतिहास, भूगोल, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, व्यायाम, रक्षा, चिकित्सा, कला आदि अनेक विषय हैं जिनका ज्ञान आज के समय में अति आवश्यक है। जीवन में मनुष्य को अपना व अपने भावी परिवार का जीवनयापन भी करना होता है। अतः रोजगार दिलाने वाले व्यवसायिक विषयों का ज्ञान भी आवश्यक है। आजकल माता-पिता अपने सन्तानों को विज्ञान, वाणिज्य, कम्प्यूटर साइंस, इंजीनियरिंग व चिकित्सा आदि की शिक्षा दिलाते हैं जिससे वह किसी रोजगार से जड़ कर सफलतापूर्वक भावी जीवन व्यतीत कर सकें।

शिक्षा पद्धति की चर्चा आने पर आजकल मुख्य रूप से पब्लिक स्कूल पद्धति प्रचलित है जहां बच्चे को प्रायः अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अध्ययन कराया जाता है और इसी भाषा के माध्यम से उसे गणित, साइंस व कला की शिक्षा दी जाती है। इण्टर या ग्रेजुएशन कर लेने पर वह इंजीनियरिंग, मेडीकल साइंस आदि अपने

इच्छित विषय को लेकर व्यवसायिक कोर्स या स्नातक व स्नातकोत्तर उपाधियां प्राप्त कर सकता है जिसके बाद उसे रोजगार मिल जाता है और वह सुख-सुविधा पूर्वक जीवन व्यतीत करता है। दूसरी शिक्षा पद्धति हमारी प्राचीन गुरुकुलीय पद्धति है। गुरुकुल का उद्देश्य बालक का शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक व आत्मिक सर्वांगीण विकास करना होता है। यहां हम शिक्षा के बारे में स्वामी दयानन्द की मान्यता का उल्लेख करना उचित समझते हैं। वह लिखते हैं कि शिक्षा उसको कहते हैं जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता व धर्म में प्रवृत्ति, जितेन्द्रियतादि की वृद्धि होवे और अविद्यादि दोष छूटें। अज्ञान व बन्धनों से छूटना जिससे सिद्ध हो वह भी विद्या होती है। शिक्षा व भाषा अर्थात् शिक्षा का माध्यम का भी परस्पर गहरा सम्बन्ध है बच्चा अंग्रेजी पढ़े इससे किसी का विरोध नहीं है परन्तु पहले वह मातृ भाषा सीखें, तत्पश्चात्, भारत पृष्ठभूमि का बच्चा, हिन्दी व संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करे, इनके माध्यम से वेद, उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति, वाल्मीकी रामायण व महाभारत आदि का विस्तृत या काम चलाऊ ज्ञान प्राप्त करे, उसके बाद व साथ में वह अंग्रेजी, गणित व साइंस आदि विषयों का ज्ञान भी प्राप्त करे तो इसमें किसी को क्या आपत्ति हो सकती है। हिन्दी व संस्कृत के ज्ञान से वह भारत के आम व्यक्ति से जुड़ जाता है जबकि पहली कक्षा से अंग्रेजी का अध्ययन उसे कई प्रकार से हिन्दी पृष्ठभूमि के बच्चों से दूर करता है। हिन्दी में भी ज्ञान, विज्ञान सहित इतिहास, भूगोल व अध्यात्म विषय

विशद साहित्य है जो केवल अंग्रेजी को जानकर व उसमें अध्ययन कर उनसे लाभान्वित नहीं हुआ जा सकता। ऐसा व्यक्ति सर्वांगीण व्यक्तित्व वाला न होकर एकांगी होता है। अन्य विषयों की शिक्षा के साथ अध्यात्म विज्ञान विषय का विशद ज्ञान तो अनिवार्य कोटि में आना चाहिये इससे व्यक्ति चरित्रवान व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनता है।

अध्यात्म का अनिवार्य ज्ञान क्यों?, तो इसका उत्तर है कि प्रत्येक मनुष्य को सर्वप्रथम यह जानना है कि यह संसार कब, कैसे व किसके द्वारा बनाया गया है। संसार को बनाने वाली सत्ता कौन है व अब कहां है? वह दिखाई क्यों नहीं देती? क्या उसे देखा जा सकता है? यदि हां तो कैसे और नहीं तो क्यों? उसका देखना आवश्यक है या नहीं? यदि आवश्यक है तो क्यों व उससे हमें व सब देखने वालों को क्या लाभ होगा? हम कौन हैं? हममें जो चेतन तत्व अर्थात् जो हम स्वयं हैं, वह कैसे उत्पन्न होता है? क्या वह अनादि, अनुत्पन्न, नित्य व अविनाशी है या उत्पन्न हुआ व मरण धर्मा है? यदि जीवात्मा उत्पन्न धर्मा व मरण धर्मा है तो हमें किसने व किस प्रयोजन से बनाया है? सृष्टि को किस पदार्थ, वस्तु या कारण तत्व से बनाया गया है? क्या यह सृष्टि पहली बार बनी है या इससे पूर्व भी बनी है? यदि इससे पूर्व भी बनी है तो उसमें क्या युक्ति व प्रमाण है और यदि पहली बार ही बनी है तो इसमें भी क्या युक्ति व प्रमाण है? मनुष्यों की आकृति - शक्ल - सूरत, लम्बाई, चौड़ाई, आकार-प्रकार व सुन्दरता-असुन्दरता तथा ज्ञान व अज्ञान का भेद क्यों है? क्या हम जो कर्म करते हैं उनका फल हमें भोगना होगा या वह क्षमा हो जायेंगे? यदि वह क्षमा होते हैं तो कौन क्षमा करता है व क्यों करता है, उसके नियम

क्या हैं एवं कब, कैसे व किसने बनाये हैं? यदि नहीं होते तो क्यों नहीं होते? ऐसे अनेकानेक प्रश्न हैं जिसके लिए हमें हिन्दी व संस्कृत का अध्ययन तथा साथ में वेद व वैदिक साहित्य का अध्ययन भी करना है। अंग्रेजी व दुनिया की अन्य किसी भी भाषा का अध्ययन करलें, इन व ऐसे प्रश्नों के पूर्ण व सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलते। अतः हिन्दी व संस्कृत का अध्ययन परम आवश्यक है। यह न केवल भारतीय व हिन्दी भाषियों के लिए अपितु दुनिया के सभी लोगों के लिए समान रूप से आवश्यक एवं उपादेय है।

शिक्षा व अध्ययन द्वारा हमें यह भी जानना है कि हमारे जन्म व जीवन का उद्देश्य क्या है अन्यथा शिक्षा अधूरी सिद्ध होगी व जीवन को सन्मार्ग के स्थान पर कुमार्ग पर ले जा सकती है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का जो उद्देश्य है, उसका उत्तर वेद व वैदिक साहित्य में ही मिलता है। हमारे जीवन का उद्देश्य सदा-सदा के लिए जन्म-मरण के दुःखों से मुक्ति व निवृत्ति है जो वैदिक शिक्षाओं का पालन यथा, सन्ध्या, यज्ञ, माता-पिता-आचार्य-गुरुजनों-वृद्धों की सेवा तथा पशु-पक्षियों आदि अन्य जीव-जन्तुओं के प्रति मैत्रीभाव रखकर प्राप्त किया जा सकता है। इसके साथ योगाभ्यास व योगसाधना से ईश्वर का साक्षात्कार कर परम सुख व आनन्द की प्राप्ति होती है जो भौतिक पदार्थों से कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता है। इसे केवल वेदों के आचार्य व अध्वेता ही समझा सकते हैं। संक्षेप में यह जान लेना उचित होगा कि ईश्वर सर्वव्यापक और आनन्दस्वरूप है एवं योग द्वारा उसका सान्निध्य मिल जाने से जीवात्मा के दुर्गुण व दुःखादि दूर होकर ईश्वर के गुण आदि के अनुरूप होकर जीवात्मा व मनुष्य के दुःखों की निवृत्ति व आनन्द की उपलब्धि होती है। सन्ध्या व ध्यान से

ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त होने पर ईश्वर का साक्षात्कार होता है और यह जन्म-मरण के दुःखों को दूर कर मुक्ति व मोक्ष प्रदान कराता है। अतः संस्कृत व हिन्दी के साथ अध्यात्म, वेद एवं वैदिक साहित्य का अध्ययन अति आवश्यक है। इसके साथ ही वह सम्पूर्ण शिक्षा जो अंग्रेजी पद्धति द्वारा दी जाती है, वह भी विद्यार्थियों को मिलनी चाहिये। इसके लिए ही गुरुकुलीय शिक्षा है जहां पुरातन व नवीन सभी विषयों का सम्यक अध्ययन कराया जाये।

गुरुकुलों में बच्चों को दुग्ध-फल व शुद्ध शाकाहारी भोजन कराया जाता है। मांसाहार, मद्य, अण्डा, धूप्रपान आदि व्यसनों का गुरुकुल शिक्षा एवं वैदिक जीवन में सर्वथा निषेध है। ब्रह्मचारी व्यायाम करते हैं एवं इसके साथ योगाभ्यास भी करते हैं। सभी प्रकार की खेल-क्रीड़ाओं व जूडो-कराटे, सूरिंग आदि का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। कलाबाजी या जिमनास्टिक की शिक्षा की भी व्यवस्था की जाती है। इससे बालक का शरीर पुष्ट व बलवान होता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन, बुद्धि व आत्मा हो सकते हैं। अतः गुरुकुल का बालक या ब्रह्मचारी बौद्धिक दृष्टि से अधिक सक्षम होता है और सभी विषयों को सरलता से ग्रहण कर सकता है। यदि गुरुकुल में रहकर बच्चे कक्षा 12 या इण्टर तक की भी शिक्षा प्राप्त कर लें तो उनकी बुनियाद सुदृढ़ हो जाती है। देहरादून की पश्चिमी दिशा में पौधा नामक ग्राम में एक गुरुकुल है जहां बालक व युवक प्राचीन गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति से अध्ययन कर रहे हैं। यहां ब्रह्मचारी रवीन्द्र तथा ब्रह्मचारी अजीत आदि अनेक युवकों ने अध्ययन किया है और सम्प्रति वह सफल जीवन की ओर अग्रसर हैं। श्री रवीन्द्र एक महाविद्यालय में प्रवक्ता है। उनका व्यक्तित्व प्राचीन व आधुनिक जीवन पद्धति का सम्मिश्रण

है जो अन्यतम है। श्री अजीत भी एक प्रतिशाली युवक हैं। वह स्नातकोत्तर शिक्षा पूरी करने के बाद आगे का अध्ययन कर रहे हैं। बहुत ही ओजस्वी वक्ता हैं एवं विद्यार्थी व युवक गुरुकुल में है। आज की आधुनिक व प्राचीन शिक्षा की सभी विशेषताओं को लेकर गुरुकुल को नया स्वरूप प्रदान कर गुरुकुल से इच्छित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। ऐसा हमारा अनमान व विश्वास है।

हम देखते हैं कि एक ही विद्यालय के सभी विद्यार्थियों की योग्यता समान नहीं होती। कई बहुत मेधावी व पढ़ाये जाने वाले विषयों को पूरी तरह ग्रहण कर लेते हैं तो बहुत से नहीं कर पाते। अध्ययन में अनेक बाते काम करती हैं। अध्यापकों के गुणी व योग्य होने के साथ स्कूल प्रशासन, बच्चे का स्वयं का पुरुषार्थ, बच्चे के पूर्व जन्म व इस जन्म के संस्कार व इस जन्म की पारिवारिक पृष्ठभूमि व परिवेश आदि अनेक कारण होते हैं। ऐसा ही गुरुकुल में भी होता है। आज देश भर में गुरुकुलों की संख्या तो बहुत है, परन्तु सरकारी सहायता प्राप्त न होना, साधनों का अभाव, अच्छे भवन, यन्त्र उपकरण की अपर्याप्त व्यवस्था, शिक्षा व पाठ्य सामग्री की कमी और आचार्यों के उचित वेतन व उनके सम्मान आदि की समुचित व्यवस्था में त्रुटियों के होने के साथ-साथ अनेक गुरुकुल के संचालकों में शिक्षा के प्रति दूरदर्शिता व आधुनिक अच्छी बातों को अपनाने का अभाव जैसी प्रवृत्तियां भी होती हैं जिससे गुरुकुल के विद्यार्थियों के विकास व उन्नति में कुछ बाधाएं आती हैं। यदि आज सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों को गुरुकुल का रूप देते हुए उन्हें आवासीय शिक्षणालय बनाकर वहां प्रातः सायं सन्ध्या, अग्निहोत्र के साथ वैदिक आर्ष व्याकरण व इतर वैदिक आर्ष ग्रन्थों यथा सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य

भूमिका, मनुस्मृति, उपनिषद्, दर्शन व वेद आदि का अध्ययन अन्य सामान्य गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि के साथ कराया जाये तो परिणाम अच्छे हो सकते हैं। हमने अनुभव किया है कि बड़े-बड़े पदों पर प्रतिष्ठित, बहुशिक्षित व पठित व्यक्तियों के जीवन भी अध्यात्म व चारित्रिक दृष्टि से अत्यन्त दुर्बल, अपूर्ण व शून्य प्रायः हैं। उनमें प्राचीन वेदकालीन भारतीय संस्कृति का न तो यथोचित ज्ञान है और न उसका गौरव। अंग्रेजी के कुछ ग्रन्थों को पढ़कर उसके अन्धभक्त होकर वे स्वयं को विद्वान्, अधिकारी व ज्ञानी होने का दम्भ करते हैं। ऐसे लोगों में देश के दुर्बल, अशिक्षित, निर्धन, भोले भाले लोगों के प्रति सहानुभूति व संवेदनाओं का भी अभाव पाया जाता है।

महर्षि दयानन्द ने मनुष्य की परिभाषा की है। वह लिखते हैं कि 'मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यो के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपनरूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।' मनुष्य की यह परिभाषा संसार के साहित्य में अपूर्व है एवं पूरी तरह से स्वामी दयानन्द के जीवन में चरितार्थ हुई देखी जा सकती है। आज इस परिभाषा को अपने जीवनो में चरितार्थ करने वाले लोगों का अभाव है। ऐसा मनुष्य केवल वैदिक गुरुकुल में बन सकता है। स्कूली शिक्षा में इसलिये नहीं कि वहां तो

विद्यार्थी का उद्देश्य धनोपार्जन व सुख-सम्पत्ति से युक्त आरामदायक जीवन व्यतीत करना है। राम, कृष्ण, पतंजलि, गौतम, कणाद, कपिल, वेदव्यास, शंकर, चाणक्य आदि गुरुकुल शिक्षा पद्धति की ही देन थे और हम यह कह सकते हैं कि उनमें यह परिभाषा ठीक-ठीक व प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती थी। हमारे देश के क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, अशफाक उल्ला खां, रोशन सिंह व लाहिड़ी, खुदीराम बोस, योगी अरविन्द एवं ऐतिहासिक पुरुष वीर शिवाजी, महाराणा प्रताप व गुरु गोविन्द सिंह आदि इस परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ करते थे। इन महान विभूतियों ने देश, धर्म व संस्कृति रक्षा के लिए जो कष्ट सहे, वह स्वतन्त्र भारत के बड़े से बड़े किसी नेता व व्यक्ति ने नहीं सहे। वस्तुतः ये 'मनुष्य' की परिभाषा को सर्वांश में अपने जीवन में चरितार्थ करते थे। इन महान विभूतियों ने देश, धर्म व संस्कृति की रक्षा के लिए जो कष्ट सहे, वह स्वतन्त्र भारत के बड़े से बड़े किसी नेता व व्यक्ति ने नहीं सहे। वस्तुतः इन्होंने भी 'मनुष्य' की परिभाषा को सर्वांश में अपने जीवनो में चरितार्थ किया था। स्वामी श्रद्धानन्द ने महर्षि दयानन्द से प्रेरणा पाकर कांगड़ी, हरिद्वार में सन् 1902 में जो गुरुकुल खोला था उसका इतिहास भी स्वर्णिम है। वहां भी देशभक्त विद्वान्, अध्यापक, उपदेशक, वेद भाष्यकार, इतिहासकार, चिकित्सक व वैद्य, पत्रकार व स्वतन्त्रता सेनानी उत्पन्न हुए जिन्होंने वेदों के आधार पर महर्षि दयानन्द द्वारा दी गई परिभाषा को अपने जीवन में चरितार्थ किया था। हमें विश्वास है कि भविष्य में गुरुकुल शिक्षा पद्धति श्रेष्ठ सिद्ध होगी और सारी दुनिया में शिक्षा के सभी उद्देश्यों को परा करने के कारण इसे अपनाया जायेगा।

□ □

स्वामी श्रद्धानन्द को, करो आर्यो याद

(पं. नन्दलाल निर्भय, पलवल (हरियाणा)

स्वामी श्रद्धानन्द थे, देश भक्त बलवान।
भारत माँ की कर गए, जग में ऊँची शान।।
जग में ऊँची शान, धन्य था उनका जीवन।
करते हैं यश गान, प्रेम से उनका सज्जन।।
देश धर्म के लिए, कष्ट झेले थे भारी।
दृष्टों से ना डरे कभी भी. थे बलधारी।।

भारत में था उस समय, अंग्रेजों का राज।
होता था अन्याय तब, था तब दुःखी समाज।।
था तब दुःखी समाज, विवश थे सब नर-नारी।
आतंकित थी हाय! देश की जनता सारी।।
आजादी की मांग, अगर कोई करता था।
सच समझो वह देश-भक्त निश्चित मरता था।।

वेद विरोधी सब जगह, होता था प्रचार।
विधर्मियों की मदद तक, करती थी सरकार।।
करती थी सरकार दुःखी ये भोले भाई।
बन जाते थे पुत्र राम के, यवन, ईसाई।।
प्रतिदिन प्रातः काल, गऊ माता बेचारी।
मित्रों! करो विचार. यहाँ जाती थी मारी।।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने देखा यह हाल।
दशा भयानक देखकर, उनको हुआ मलाल।।
उनको हुआ मलाल, ठोस फिर कदम उठाया।
आजादी का महावीर ने बिगुल बजाया।।
गाँधी जी का साथ दिया, थे अद्भुत स्वामी।
सच्चाई के सदा रहे. वो सच्चे हामी।।

पाया दिल्ली नगर में, जिस दम रौलट ऐक्ट।
कद पड़े मैदान में. नेता थे परफैक्ट।।

नेता थे परफैक्ट, गजब का जोश दिखाया।
एक विशाल जुलूस निकाला, जग चकराया।।
संगीनों के सुनो सामने तानी छाती।
आगे से हट गए. सभी गोरे उत्पाती।।

खोला गुरुकुल कांगड़ी, भारी किया कमाल।
जग में कायम कर गए, स्वामी एक मिसाल।।
जग में एक मिसाल, देश को बचा लिया था।
अपना सब कुछ देश, धर्म पर वार दिया था।।
इन्द्र और हरिश्चन्द्र, पुत्र अपने दो प्यारे।
स्वामी जी ने देश. धर्म पर दोनों वारे।।

शुद्धि चक्र ले हाथ में, स्वामी श्रद्धानन्द।
विधर्मियों से भिड़ गए, नेता दानिशमन्द।।
नेता दानिशमन्द, घोर संग्राम मचाया।
पापी धर्रा गये, खलों ने पाप कमाया।।
अब्दुल रसीद ने रूग्ण, साधु को गोली मारी।
पाप कर्म से नहीं डरा वह अत्याचारी।।

देश, धर्म पर हो गए स्वामी जी कुर्बान।
आर्यो कुमारो! देश का, करो अरे तुम ध्यान।।
करो अरे तुम ध्यान, फूट पापिन का त्यागो।
करो परस्पर मेल, पुत्र ऋषियों के जागो।।
शुद्धि का दो बजा, सकल जगती में डंका।
फंको वन हनमान. दष्ट रावण की लंका।।

स्वामी श्रद्धानन्द को, करो आर्यो याद।
जुटो वेद प्रचार में, तज दो अब प्रमाद।।
तज दो अब प्रमाद, दोस्तो! करो भलाई।
तजो ईर्ष्या! द्वेष, काम है यह सुखदाई।।
सच्चा साथी धर्म, काम मित्रो! आयेगा।
यह सारा संसार. तम्हारा यश गायेगा।।

□ □

आर्य हिन्दू राजाओं का चारित्रिक आदर्श (डॉ. विवेक आर्य)

जहाँ एक ओर मुस्लिम आक्रान्ताओं ने हिन्दू लड़कियों को अगवा कर अपने हरम भरने की होड़ लगा रखी थी वहीं दूसरी ओर हिन्दू राजाओं जैसे महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, वीर दुर्गा दास राठौड़ ने अपने चरित्र के आदर्श से संसार के समक्ष एक अनुसरणीय उदाहरण स्थापित किया था जिसे देख कर एक ही निष्कर्ष निकलता है कि बुर्के से अधिक शुद्ध विचार और आचरण कि आज पूरे विश्व को नारी जाति के सम्मान के लिए आवश्यकता है। इस लेखक को पढ़कर आपको महान हिन्दू राजाओं के शुद्ध चरित्र से प्रेरणा मिलेगी।

भारत देश की महान् वैदिक सभ्यता में नारी को पूजनीय होने के साथ साथ 'माता' के पवित्र उद्बोधन से संबोधित किया गया है।

मुस्लिम काल में भी आर्य हिन्दू राजाओं द्वारा प्रत्येक नारी को उसी प्रकार से सम्मान दिया जाता था जैसे कोई भी व्यक्ति अपनी माँ का सम्मान करता है।

यह गौरव और मर्यादा उस कोटि के हैं, जो कि संसार के केवल सभ्य और विकसित जातियों में ही मिलते हैं।

महाराणा प्रताप के मुगलों के संघर्ष के समय स्वयं राणा के पुत्र अमर सिंह ने विरोधी अब्दुरहीम खानखाना के परिवार की औरतों को बंदी बनाकर कर राणा के समक्ष पेश किया तो राणा ने क्रोध में आकर अपने बेटे को हुकुम दिया कि तुरंत उन माताओं और बहनों को पूरे सम्मान के साथ अब्दुरहीम खानखाना के शिविर में छोड़ कर आये एवं भविष्य में ऐसी गलती दोबारा न करने की प्रतिज्ञा करे।

ध्यान रहे महाराणा ने यह आदर्श उस काल में

स्थापित किया था जब मुगल अबोध राजपूत राजकुमारियों के डोले के डोले से अपने हरम भरते जाते थे। बड़े बड़े राजपूत घरानों की बेटियाँ मुगलिया हरम के सात पर्दों के भीतर जीवन भर के लिए कैद कर दी जाती थी। महाराणा चाहते तो उनके साथ भी ऐसा ही कर सकते थे पर नहीं उनका स्वाभिमान ऐसी इजाजत कभी नहीं देता था।

औरंगजेब के राज में हिन्दुओं पर अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। हिन्दू या काफिर होना तो पाप ही हो गया था। धर्मान्ध औरंगजेब के अत्याचार से स्वयं उसके बाप और भाई तक न बच सके, साधारण हिन्दू जनता की स्वयं पाठक कल्पना कर सकते हैं। औरंगजेब की स्वयं अपने बेटे अकबर से अनबन हो गयी थी। इसी कारण उसका बेटा आगे के किले को छोड़कर औरंगजेब के प्रखर विरोधी राजपूतों से जा मिला था जिनका नेतृत्व वीर दुर्गादास राठौड़ कर रहे थे।

कहाँ राजसी ठाठ बाठ में किलो की शीतल छाया में पला बढ़ा अकबर, कहाँ राजस्थान की भस्म करने वाली तपती हुई धूल भरी गर्मियाँ। शीघ्र सफलता न मिलते देख संघर्ष न करने का आदि अकबर एक बार राजपूतों का शिविर छोड़ कर भाग निकला। पीछे से अपने बच्चों अर्थात् औरंगजेब के पोता-पोतियों को राजपूतों के शिविर में ही छोड़ गया। जब औरंगजेब को इस बात का पता चला तो उसे अपने पोते-पोतियों की चिन्ता हुई क्योंकि वह जैसा व्यवहार औरों के बच्चों के साथ करता था कहीं वैसा ही व्यवहार उसके बच्चों के साथ न हो जाए। परन्तु वीर दुर्गा दास राठौड़ और औरंगजेब में भारी अंतर था। दुर्गादास की रगों में आर्य जाति का

लहू बहता था। दुर्गादास ने प्राचीन आर्य मर्यादा का पालन करते हुए ससम्मान औरंगजेब के पोता-पोती को वापिस औरंगजेब के पास भेज दिया जिन्हें पाकर औरंगजेब अत्यंत प्रसन्न हुआ। वीर दुर्गादास राठोड़ ने इतिहास में अपना नाम अपने आर्य व्यवहार से स्वर्णिम शब्दों में लिखवा लिया। वीर शिवाजी महाराज का सम्पूर्ण जीवन आर्य जाति की सेवा, रक्षा, मंदिरों के उद्धार, गौ माता के कल्याण एवं एक हिन्दू राष्ट्र की स्थापना के रूप में गुजरा जिन्हें पढ़कर प्राचीन आर्य राजाओं के महान् आदर्शों का पुनः स्मरण हो जाता है। जीवन भर उनका संघर्ष कभी बीजापुर से, कभी मुगलों से चलता रहा। किसी भी युद्ध को जीतने के बाद शिवाजी के सरदार उन्हें नजराने के रूप में उपहार पेश करते थे। एक बार उनके एक सरदार ने कल्याण के मुस्लिम सूबेदार की अति सुन्दर बीवी शिवाजी के सम्मुख पेश की। उसको देखते ही शिवाजी महाराज अत्यंत क्रोधित हो गए और उस सरदार को तत्काल यह हुक्म दिया कि उस महिला को ससम्मान वापिस अपने घर छोड़ आये। अत्यंत विनम्र भाव से शिवाजी उस महिला से बोले, “माता आप कितनी सन्दर हैं, मैं भी आपका पत्र

होता तो इतना ही सुन्दर होता। अपने सैनिक द्वारा की गई गलती के लिए मैं आपसे माफी मांगता हूँ।” यह कहकर शिवाजी ने तत्काल आदेश दिया कि जो भी सैनिक या सरदार जो किसी भी ऊँचे पद पर होगा अगर शत्रु की स्त्री को हाथ लगायेगा तो उसका अंग छेदन कर दिया जायेगा।

कहाँ औरंगजेब की सेना के सिपाही जिनके हाथ अगर कोई हिन्दू लड़की लग जाती या तो उसे अपने हरम में गुलाम बना कर रख लेते थे अथवा उसे खुले आम गुलाम बाज़ार में बेच देते थे और कहाँ वीर शिवाजी का यह पवित्र आर्य आदर्श।

इतिहास में शिवाजी की यह नैतिकता स्वर्णिम अक्षरों में लिखी गई है।

इन ऐतिहासिक प्रसंगों को पढ़ कर पाठक स्वयं यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि महानता और आर्य मर्यादा व्यक्ति के विचार और व्यवहार से होती है। धर्म की असली परिभाषा उच्च कोटि का पवित्र और श्रेष्ठ आचरण है। धर्म के नाम पर अत्याचार करना केवल अज्ञानता और मर्खता है।



पृष्ठ 6 का शेष

चाहूँगा कि युवाओं का और राजनीति का आपस में चोली दामन का सम्बन्ध तभी माना जायेगा जब राजनीति में जाने वाला युवा जिष्णु होगा, रथेष्ठा होगा, सभ्य होगा और वीर होगा। युवा तभी इस देश का कर्णधार बनेगा जब वो जिष्णु, रथेष्ठा, सभेय और वीर होगा, तभी देश की और राजनीति की तकदीर बनेगा। हम सबके सामने अब प्रश्न यही है कि राष्ट्र और राजनीति के उद्धार के लिए तथा राष्ट्र में राजनीति के नये मापदण्ड स्थापित करने के लिए जिष्णु युवाओं का, रथेष्ठा युवाओं का, सभेय युवाओं का और वीर युवाओं का निर्माण कैसे हो?

मैं चलते-चलते एक निवेदन और कर दूँ कि कोई पाठक मेरे उपर्युक्त आशय से यह ना समझे कि मैंने इस लेख में जितनी भी बातें/गुण लिखी हैं, वे सब केवल युवा वर्ग के लिए हैं। बुजुर्गों के लिए नहीं। आज की चर्चा/प्रसंग युवाओं का है। ये बातें तो सबके लिए समान रूप से वांछित है/अपेक्षित है। युवा का अर्थ है, जो गति दे सके। जो गति न दे सके तो फिर वह किसी भी आयु का हो, वह युवा नहीं और जो गति दे सके, वह चाहे किसी उम्र का हो, वह युवा है। कहने का आशय है कि युवा होने के लिए गतिशील होना पहली शर्त है।

वैदिक संस्कृति पर सरकारी आक्रमण तथा हमारी यह चुप्पी (डॉ. रघवीर वेदालंकार)

यह सरकार निरन्तर वैदिक संस्कृति पर पुरजोर आक्रमण करती जा रही है क्योंकि इसकी संचालिका एक विदेशी तथा ईसाई महिला है। हमारे मौन प्रधानमन्त्री स्वयं स्वीकार कर चुके कि वे सोनिया जी से दिशा निर्देश लेते रहे हैं। इसी सरकार ने न्यायालय में झूठा शपथ पत्र दिया था कि राम कभी इस देश में हुए ही नहीं। तथा समुद्र पर राम सेतु उन्होंने नहीं बनाया। पूर्वजों के इतने बड़े अपमान तथा मिथ्या पर भी हम चुप रहे। हमने इसे न्यायालय में चुनौती नहीं दी। इसी सरकार के कारण 'लिव इन रिलेशन' जैसे अनैतिक सम्बन्ध बढ़ रहे हैं जिससे वैवाहिक संस्था भी ध्वस्त होती जा रही है। हम इस पर भी खामोश रहे। हमने कभी नहीं कहा कि इस प्रकार का सम्बन्ध सर्वथा असामाजिक तथा अशोभनीय है। फलतः न्यायालय से भी मान्यता मिल गयी। कोई लड़का किसी लड़की को बहला-फुसला कर उसके घर से भगा ले जाए तथा शादी कर ले तो सरकार तथा न्यायालय ने उसे भी मान्यता दे दी। भले ही ऐसे युवक युवतियां एक ही ग्राम के या एक ही गोत्र के हों, जो सामाजिक मर्यादा एवं परम्परानुसार आपस में भाई बहिन ही लगते हैं। हमने कभी वेद के सूक्त को आगे करके नहीं कहा कि ऐसे विवाह परम्परा, शास्त्र एवं समाज के विरुद्ध हैं। अब आया समलैंगिकता का मामला। इसके विरुद्ध भी जनता जनार्दन में कोई आक्रोश नहीं, कोई हंगामा नहीं, कोई आन्दोलन नहीं। हम अभी भी बड़े-बड़े यज्ञ तथा राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन करने में लगे हैं। इस हिन्द

जनता से तो कोई आशा नहीं की जा सकती क्योंकि यह तो आसाराम, निर्मल बाबा, कुमार स्वामी, साईं बाबा आदि के चरणों में ही समर्पित है। आर्यसमाज एक क्रान्तिकारी आन्दोलन था। वह भी अब ऐसे राष्ट्रीय विवादों में चुप्पी साधे हए है।

प्रिय आर्यजन

दे रही हैं आंधियां द्वार पर दस्तक तुम्हारे

तुम नहीं जगे तो यह सारा जमाना क्या कहेगा।

अभी सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिकता को दण्डनीय मानते हुए धर्मों का भी उल्लेख किया है किन्तु आवश्यक नहीं कि सरकार धार्मिक आधार पर इस कुकृत्य का विरोध करे। हां, धार्मिक संगठनों के दबाव में ऐसा अवश्य हो सकता है।

इस कार्य को सामाजिक आधार पर देखा जाए। सरकार समाज की रक्षा के लिए ही तो बनी है, न कि इसे तथा इसकी मर्यादाओं को तोड़ने के लिए। यह कार्य सामाजिक दृष्टि से भी अमान्य है, क्योंकि -

1. भारत में 1.25 अरब लोग रहते हैं। इनमें से अधिकतम 20-25 करोड़ लोग ही इसका समर्थन कर रहे हैं। कांग्रेस के जो लोग पार्टी से बंधे हुए इसके पक्ष में बोल रहे हैं, क्या वे अपने घरवालों से भी इसका समर्थन करा सकते हैं? पार्टी से अलग हटकर क्या समस्त कांग्रेसी इस प्रथा का समर्थन करेंगे। मेरे विचार से सौवां प्रतिशत भी नहीं। तो ऐसी क्या मजबूरी तथा दासता है कि सोनिया गांधी तथा राहुल गांधी ने न्यायालय के निर्णय से असन्तोष व्यक्त कर दिया तो मन्त्री स्तरीय

कांग्रेसी भी उसी भाषा को बोलने लगे। कम से कम नैतिक विषयों में तो उन्हें अपनी आत्मा की आवाज सुननी तथा उठानी चाहिए। डॉ. योगानन्द, डॉ. रामप्रकाश, मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा आदि अनेक लोग कांग्रेस में घुटे हुए आर्यसमाजी हैं। क्या पद के लिए ऐसे विषयों पर भी चुप रह कर इन्हें आत्मग्लानि नहीं होती।

2. यदि सरकार इन 20-25 लाख लोगों के लिए कानून बनाने को प्रतिबद्ध है तो कल को यदि 10-20 हजार या लाख लोग मिल कर कहें कि भाई-बहिन, देवर-भाभी, ससुर-बहू आपस में सहमति से यौनाचार करना चाहें तो क्या समाज तथा सरकार इसकी इजाजत देगी? ऐसे व्यक्ति मिल जायेंगे। अखबार में दे दीजिए कि उक्त सम्बन्ध अपराध की श्रेणी में नहीं आते, फिर देखिए कि समाज में क्या उथल-पुथल होती है। इसी प्रकार यदि यह कानून बन जाए कि वृद्ध माता-पिता को गुजारा भत्ता देना अनिवार्य नहीं तो तब देखिए कि लाखों से अधिक व्यक्ति इसके समर्थन में उठ खड़े होंगे क्योंकि अभी भी अनेक वृद्ध माता पिताओं को न्यायालय की शरण में ही जाना पड़ता है। कल को हुड़दंगे आन्दोलन करने लगे कि हम तो सड़कों पर नंगे घुमेंगे, सड़कों पर ही अपनी काम पिपासा भी शान्त कर लिया करेंगे तो क्या सरकार तथा समाज इसकी आज्ञा देगा। रजनीश ने पुना में ऐसा किया था। अतः यदि प्रतिबन्ध हट जाए तो लाखों लोग ऐसा करने को तैयार हो जायेंगे।

एक चोली सम्प्रदाय होता था जिसकी चर्चा महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में की है। आज वह इस रूप में चल रहा है कि रात्रि के अन्धकार में अनेक स्त्री पुरुष इकट्ठा होकर अपनी-2 चाबियां एक स्थान पर एकत्रित कर देते हैं। तथा पुनः चाबियों को गड्मगड करके उठाते हैं। जिस स्त्री तथा पुरुष के हाथ में

जिसकी भी चाबी आ जाए, वह उसके साथ ही भोगार्थ रात्रि व्यतीत करते हैं। यदि प्रतिबन्ध न हो तो इसके समर्थन में कई लाख मिल जायेंगे। क्या सरकार इसे मान्यता देगी?

3. इस प्रकार यह तो कोई तर्क है ही नहीं कि समलैंगिकता के लाखों पक्षधर हैं तथा यह उनकी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का मामला है। व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। जन्म लेते ही वह सामाजिक बन गया। इसलिए वह सामाजिक नियमों में परतन्त्र है। जब सरकारें नहीं थी, तब भी समाज में सामाजिक नियम थे, तभी समाज चल रहा था। गांव में घोर अस्पृश्यता होने पर भी एक बुजुर्ग भंगी को भी ताऊ-चाचा कहा जाता है तथा उसकी लड़की को बहन माना जाता है। ये सामाजिक मर्यादाएं थी। इनका पालन अब भी आवश्यक है। समलैंगिकता के समर्थक इन कुछ लाख लोगों को छोड़कर हिन्दू, सिख, मुस्लिम, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि के रूप में प्रचलित धर्म तथा ब्राह्मण, त्यागी, यादव, गुजर, जाट यहां तक कि दलित जातियां भी समलैंगिकता का समर्थन नहीं करतीं तो क्या सरकार को इस विशाल जन समुदाय तथा वृहत् समाज का कोई ध्यान नहीं? जिन कार्यों को यह विशाल जन समुदाय स्वीकार न करे, सरकार उसे कैसे थोप सकती है। इस विषय में जनमत संग्रह भी कराया जा सकता है।

राज्य के भी नियम होते हैं तथा समाज के भी एवं शास्त्र प्रतिपादित नैतिक नियम भी। इन सबके पालन से ही राष्ट्र चलता है न कि मर्यादाहीन लोगों की मांगों मान कर। पतंजलि मुनि लिखते हैं कि कुत्ते के मांस से भी तो भूख मिटायी जा सकती है, किन्तु नहीं। यहां पर नियम बनाया जाता है कि यह भक्षणीय है, यह

भक्षणीय नहीं। कुत्ते का मांस भक्षणीय नहीं है। पतंजलि दूसरा उदाहरण देते हैं कि काम विकार की शान्ति के लिए स्त्री की ओर प्रवृत्ति होती है। किसी भी स्त्री के साथ संभोग करने से काम शान्त हो जायेगा किन्तु यहां भी नियम बनाया जाता है कि केवल अपनी पत्नी से ही सम्बन्ध बनाया जाए, अन्य से नहीं। यहां अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता क्यों नहीं दी जाती? क्योंकि इससे समाज भ्रष्ट हो जायेगा। इसलिए प्रत्येक कार्य को अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता नहीं माना जा सकता। नियम या प्रतिबंध तो प्रत्येक क्षेत्र में लगाने ही होंगे। महर्षि दयानन्द ने इसीलिए लिखा है कि प्रत्येक को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए। समाज सामाजिक, नैतिक तथा राष्ट्रीय नियमों से चलता है, न केवल राजकीय नियमों से। समलैंगिक जैसे व्यक्ति अभी भी समाज में आदरणीय नहीं हैं। लोग इन्हें उपेक्षा तथा आपराधिक दृष्टि से देखते हैं। यदि इसके पक्ष में नियम बन जाए तो ऐसे लोग समाज में निर्विघ्न घुमेंगे। कल्पना कीजिए कि यदि किसी परिवार में कोई एक युवक या युवती समलैंगिक जो जाए तो पूरा परिवार उसे किस रूप में देखेगा। यदि परिवार इसे ठीक मानता है तो पूरा परिवार भी समलैंगिक बन सकता है, यदि ठीक नहीं मानता तो ऐसे युवक युवतियों का या तो बहिष्कार होगा या घर में दंगम-दंगा। ऐसे में यह समाज, इसकी मर्यादाएं तथा विवाह जैसी संस्थाओं का क्या होगा? क्या सरकार इस पर सोचती है।

4. समलैंगिकता प्राकृतिक भी नहीं है। प्रकृति ने प्रत्येक इन्द्रिय का कार्य नियत किया हुआ है। भोग तथा सन्तति के लिए स्त्री पुरुष का ही समागम निहित है। अन्य का किसी दृष्टि से नहीं। पशु भी नर-मादा

ही समागम कहते हैं। समलैंगिक नहीं। क्या मनुष्य पशुओं से भी नीचे गिर गया। इस कार्य से अनेक रोग भी उत्पन्न हो रहे हैं।

5. डॉक्टर भी कह देते हैं कि यह कार्य तो स्वाभाविक है। इससे शरीर पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं। मान लेते हैं तो क्या समाज डॉक्टर की राय से ही चलेगा। डॉक्टर शरीर के सम्बन्ध में तो कह सकता है, समाज तथा नैतिक नियमों का विधायक तो वह नहीं। कुछ अधम व्यक्ति पशुओं के साथ भी यौनाचार करते हैं। डॉक्टर के हिसाब से तो गलत नहीं, किन्तु क्या समाज, शास्त्र तथा सरकार इसे मानेंगे।

6. समलैंगिकता किसी भी दृष्टि से उचित नहीं, तभी तो यमन-सऊदी अरब, ईरान आदि में इसकी सजा मृत्यु ही है। आस्ट्रेलिया में भी इसे अपराध माना गया है। इंग्लैण्ड में इसी अपराध में एक उच्च स्तरीय वैज्ञानिक को द्वितीय महायुद्ध के समय मृत्यु की सजा सनायी गई थी। 'नवभारत' में यह छपा था।

8. रावण तथा दुर्धोधन, जरासन्ध, कंस आदि के राज्य को अच्छा नहीं माना जाता। सभी दुष्कर्म तब होते थे, किन्तु समलैंगिकता तो तब भी नहीं थी। सरकार कुछ तो सोचे। यदि नहीं सोचती तो इस समस्त समाज का ही दायित्व है कि वह एकजुट होकर सरकार को सदा-सदा के लिए ऐसे अनैतिक, असामाजिक कार्य करने से रोके। इस विषय में कोई आग्नेय पुरुष क्रियात्मक रूप से कुछ करे तो जनता साथ लगेगी।

समलैंगिक तो जलूस निकालते हैं, अपनी मांग उठाते हैं, किन्तु यह मूक बधिर जनता न प्रदर्शन कर रही, न आन्दोलन, यहां तक कि तेज आवाज भी इसके विरोध में नहीं निकाल रही तो समाज कैसे बचेगा?

आओ. सत्यार्थ प्रकाश प्रचार-प्रसार योजना को और व्यापक बनाएं

समस्त आर्यजनों को यह जानकर अतीव हर्ष होगा कि 'आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट' ने आर्य समाज के कार्यों को अधिक गति देने के लिए महर्षि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश की प्रचार-प्रसार योजना को विस्तृत रूप में क्रियान्वित करने का निश्चय किया है। फरवरी-2014 में आयोजित विश्व पुस्तक मेले में लगभग 25,000 सत्यार्थप्रकाश केवल 10 रु0 में वितरित करना है। इसमें 20 रु0 प्रति पुस्तक दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा को वहन करना है, जो कि आप सब के सहयोग से ही सम्भव है। हम सबका यह कर्तव्य बनता है कि इस पवित्र कार्य में सभा का दिल खोलकर सहयोग करें। हमने अपनी तरफ से इसके लिए पूरी तैयारी कर ली है। लगभग दो लाख रुपये व्यय करके 6 स्टाल बुक कराए गए हैं। दिल्ली सभा के सहयोग से इस पुनीत कार्य को सम्पन्न किया जाएगा। हमारा पूरा प्रयास रहेगा कि गैर आर्य समाजी सामान्य जनता तक यह अमूल्य ग्रन्थ पहुंचाया जाय। कहने की आवश्यकता नहीं कि जिस प्रकार सूर्य के समक्ष अन्धकार नहीं ठहर सकता, उसी प्रकार जहां-जहां सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाश होगा, वहां-वहां पाखण्ड,अन्धविश्वास, अज्ञानता, कुप्रथाएं अथवा किसी प्रकार की बुराई नहीं टिक सकती। सत्यार्थ प्रकाश के रहते किसी की ताकत नहीं कि वह भोली-भाली जनता को बहला-पफसला कर विधर्मी बना सके। इतिहास साक्षी है, जिस किसी ने भी इस ग्रन्थ का गम्भीरता से अध्ययन किया है, उसके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन आया है। पं० गुरुदत्त विद्यार्थी और पं० लेखराम आदि इसके सटीक उदाहरण हैं, जिन्होंने इस क्रान्तिकारी ग्रन्थ को पढ़कर देश, धर्म व जाति के लिए अपना सहर्ष बलिदान कर दिया। यही कारण है कि सत्यार्थ प्रकाश को जन-जन तक पहुंचाने के लिए ट्रस्ट कृतसंकल्प है और पूरी गम्भीरता के साथ इसके प्रचार-प्रसार में संलग्न है। इस आसमान छूती महंगाई का असर ट्रस्ट ने अपने यहां से प्रकाशित साहित्य पर नहीं पड़ने दिया है और सत्यार्थ प्रकाश पर तो सर्वथा नहीं, यह ऋषि और ऋषि-ग्रन्थों के प्रति समर्पण का प्रमाण है। 480 पृष्ठ बढ़िया कागज पर मुद्रित और सुन्दर जिल्द से सुसज्जित इस ग्रन्थ को हम आज भी केवल 30 रु0 में उपलब्ध करा रहे हैं। आर्यजनों के स्नेह और विश्वास का ही सुपरिणाम है कि हम आज तक सत्यार्थ प्रकाश के 80 संस्करण प्रकाशित कर जनता की सेवा में पहुंचा चुके हैं और जल्दी ही 81वां संस्करण छपने वाला है। हमारा सपना है, देश के हर परिवार में सत्यार्थ प्रकाश पहुंचाना और तभी यह सपना पूरा होगा जबकि हम अपने परम लक्ष्य 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को प्राप्त कर सकें। आप सभी से हार्दिक अपील है कि दिल्ली सभा का तन-मन-धन से सहयोग करें, जिससे हम अपने परम लक्ष्य 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को प्राप्त कर सकें। बच्चों तक ऋषि को पहुंचाने के लिए हमने अनेकों प्रकार की सचित्र पुस्तकें (Comic) प्रकाशित की हैं, जिससे उनका स्वस्थ मनोरंजन हो सके और खेल-खेल में ऋषि की विचारधारा को भी आत्मसात कर सकें।

आर./आर. नं० १६३३०/६७ फरवरी २०१४

Post in Delhi R.M.S

०१-०७/२/२०१४

फरवरी २०१४

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2012-14

लार्डसेन्स नं० य (डी०एन०) १४४/२०१२-१४

Licenced to post without prepayment

Licence No. U (DN) 144/2012-14

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो तो सचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कपा करें।

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट

427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6

Ph. :011-43781191, 09650622778

E-mail : aspt.india@gmail.com

— दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

श्री सेवा में

छपी पुस्तक/पत्रिका

ग्राम

डा०

जिला

दयानन्दसन्देश ● फरवरी २०१४ ● २८

प्रकाशक : धर्मपाल आर्य, ४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-६

मद्रक : ईरानियन आर्ट प्रिण्टर्स, १५३४, गली कासिमजान, बल्लीमाराज, दिल्ली-६